ॐ

श्रीवीतरागाय नमः

श्रीसुधर्मास्वामिविरचित

श्रीमद्उपासकदशासूत्र

(हिन्दी अनुवाद सहित)

अनुवादक—खज़ानची राम जैन

मंत्री—श्री श्वे० स्था० जैन कुमारसभा—लाहौर

प्रकाशक—मेहरचन्द्र लक्ष्मणदास जैन

संस्कृत पुस्तकालयाध्यक्ष लाहौर (पंजाब)

इन्होंने

बम्बईमें "निर्णयसागर" मुद्रणयन्त्रालयमें छपवाकर

प्रसिद्ध किया

(प्रथमावृत्ति १००० प्रति)

मूल्य १॥) रुपया.

ई. सं. १९१७ म. नि. सं. २४४३.

Published by Meherchandra Laxmandas, Jain
Sanskrit Book-Depot, Lahore—Panjab.

Printed by Ramchandra Yesu Shedge at the Nirnaya-sagar Press,
23, Kolbhat Lane, Bombay.

समर्पण ।

जिनके अनुग्रह और उत्साह दानसे
मेरी लेखन कलाकी ओर
प्रवृत्ति हुई
और
जिनका आश्रय
मेरे लिये कल्पवृक्ष हुआ
उन
गुरुवर्य्य परमपूज्य श्री श्री १००८ स्वामी
सोहन लालजी महाराजके
कर कमलों में
हार्दिक भक्तिसे प्रेरित हो
अनुवादकद्वारा यह तुच्छ हिन्दी अनुवाद
सादर समर्पित है।

खज़ानची राम जैन
लाहौर

कृतज्ञता-प्रकाश

मैं जैन मुनि श्री श्री श्री १००८ श्री कालूरामजी महाराज का अत्यन्त कृतज्ञ हूं जिन्हों ने लाहौरमें अपने अमूल्य समयको मेरे अर्पणकरके मुझे अति परिश्रमसे श्रीमद् उपासकदशा सूत्रको पढाया अतः मैं सर्वज्ञदेव से सदा प्रार्थना करता हूं कि आपकी धर्मबुद्धि की अतीव वृद्धि हो ताकि आप इसप्रकारके उपकार करनेमें और भी समर्थ हों।

मैं सर्वगुणगणालंकृत, विद्वद्रत्न, हिन्दीहितैषी माननीय श्री श्री श्री १००८ उपाध्याय आत्मारामजी महाराजका बहुत ही अनुगृहीत हूं जिन्होंने अपने बहुमूल्य समयको मेरे अर्थ व्यय करके बडी सावधानीसे इस पुस्तकको आदिसे अन्ततक संशोधन किया है। आप बड़े परोपकारी हैं आपने अनुयोगद्वार सूत्रका अभी हिन्दी अनुवाद करके समाज पर बडा ही उपकार किया है। जैनसिद्धांत, आवश्यक सूत्र इत्यादि कई हिन्दी जैन पुस्तक आपके बनाये हुए उपलब्ध हैं। मैं जिनेन्द्र भगवान् से सदैव काल प्रार्थना करता हूं कि आपकी दीर्घ आयु हो ताकि आप जैसे समाजहितैषी विद्वानों की कृपासे जैनसमाज उन्नतिको प्राप्त होसके।

खज़ानची राम जैन

लाहौर.

प्रस्तावना

प्रिय महाशय! जैसे प्रत्येक प्राणीको अपने जीवनकी अत्यंत इच्छा रहती है उसी प्रकार जीवन सुधार की इच्छा होनी चाहिये क्योंकि पवित्र जीवन औरों के लिये एक आदर्श बनजाता है उसके आश्रयसे अनेक आत्मा अपना उच्च जीवन करसक्ती हैं वस्तुतः जीवन पवित्र करनेके लिये मुख्य दो उपाय हैं एक सुपुरुषों की संगति द्वितीय शास्त्राध्ययन किन्तु अबोध प्राणियों के लिये शास्त्रों में आये हुये धार्मिक इतिहासों के पठनसे विशेष लाभ होता है इतनाही नहीं किन्तु पूर्व समयके कर्तव्यों का भी भली भ्रांतिसे बोध होजाता है इसी आशय से प्रेरितहोकर मैं ने अपनी शक्ति अनुसार "श्रीमद् उपासक दशाङ्ग" सूत्रका सरलहिंदीभाषामें अनुवाद किया है.

यह सूत्र प्राकृत भाषामें रहने से इसका अर्थ समझने में साधारण पुरुषों को पराधीन करता था यह न्यूनता भी देखकर मैं ने इसका हिन्दी अनुवाद किया है किन्तु मुझे प्राकृत वा संस्कृतका विशेष ज्ञान नहीं है इसी लिये अर्थ करने में यदि मेरे से कोई भूल हो गई हो तो मेरी भूल की उपेक्षा करके मुझे सूचित करें जिससे कि—द्वितीयावृत्ति में वह भूल शुद्धकर दीजाय मेरा निज आशय तो इतनाही है की जैसे—आनंद, कामदेव, चुलणीपिता सुरादेव, चुल्लशत्तकादि गृहस्थों ने अपने जीवन को पवित्र बनाया है उसीप्रकार सर्व सद्धर्मावलम्बी गृहस्थ अपने जीवन को पवित्र बनाये जैसे आनन्दादि श्रमणोपासकों ने धनके तीन भाग करके केवल तीसरे भागसे ही व्यापार किया है उसी प्रकार यदि इसका अनुकरण हमारे भ्रातृगण

करें तो उनको कभी भी कष्टों का मुख न देखना पड़े और ना ही चिन्ताओं से मनको व्याकुलता होवे शिवनंदा भार्या की तरह प्रत्येक पत्नीको धर्मसाहायक होना चाहिये और पतिव्रता धर्ममें दृढ होना चाहिये इत्यादि शिक्षा इस सूत्रसे प्राप्त होती हैं.

यद्यपि जैनोंके असंख्य शिक्षा विधायक और धर्मग्रन्थ उपलब्ध हैं और उनमें अकाट्य युक्तियोंद्वारा मोक्ष प्राप्तिसे उपायोंका वर्णन किया गया है किंतु यह सूत्र श्री सुधर्म्मा स्वामिकृत गृहस्थधर्ममें दीक्षित होनेवालों के लिये अत्यन्त उपयोगी है इसलिये समस्त सनातन जैन धर्माभिमानी विज्ञ लोगों को चाहिये कि इस अत्यन्त प्रामाणिक, प्रतिष्ठित "श्रीमद् उपासदशाङ्ग" को आद्यन्त अवलोकन करें जहां तक मेरे से हो सका है मैं ने मूल आशयको दूषित होने नहीं दिया इसलिये इस अनुवाद के साथ मूलभी मुद्रित किया गया है जिससे कि प्राकृत सूत्र पठन करनेकी शैली फिर जागृत हो और सामायिकादि करके इस सूत्रके स्वाध्यायसे श्रावक जन अपने कालको सफल करें।

मुझे पूर्ण आशा है कि मेरे इस परिश्रम को देखकर मेरे स्वधर्मी भाई मेरे उत्साह को बढावेंगे जिससे कि मैं और भी किसी सूत्रके अनुवाद करनेमें उत्साहित हूंगा और श्रीसंघकी सेवा करने का मुझे और भी सौभाग्य प्राप्त होगा. !

विज्ञेषु किं बहुना

भवदीय

खज़ानची राम जैन

लाहौर.

सत्तमं अङ्गं

सातवां अङ्ग

उवासग दसाओ

उपासक दशा

पढमं अज्झयणं

प्रथम अध्याय

तेणं कालेणं तेणं समएणं चम्पा नामं नयरी होत्था । वण्णओ । पुण्णभद्दे चेइए । वण्णओ ॥ १ ॥

उस काल, (जिस काल भगवान् महावीरजी विद्यमान थे) उससमय चम्पा नामा एक नगरी थी (वण्णओ) उसमें पूर्णभद्र उद्यान था (वण्णओ) जिसका विवर्ण उववाई सूत्रानुसार जानना चाहिए ॥ १ ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं अज्जसुहम्मे समोसरिए जाव जम्बू पज्जुवासमाणे एवं वयासी । "जइ णं, भन्ते, समणेणं भगवया महावीरेणं जाव सम्पत्तेणं छट्ठस्स अङ्गस्स नायाधम्मकहाणं अयमट्ठे पण्णत्ते,

सत्तमस्स णं, भन्ते, अङ्गस्स उवासगदसाणं समणेणं जाव सम्पत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते?"।

एवं खलु, जम्बू, समणेणं जाव सम्पत्तेणं सत्तमस्स अङ्गस्स उवासगदसाणं दस अज्झयणा पण्णत्ता। तं जहा। आणन्दे ।१। कामदेवे य ।२ गाहावइ चुलणीपिया ।३। सुरादेवे ।४। चुल्लसयए ।५। गाहावइ कुण्डकोलिए ।६। सद्दालपुत्ते ।७। महासयए ।८। नन्दिणीपिया ।९। सालिहीपिया ।१०।

"जइ णं, भन्ते, समणेणं जाव सम्पत्तेणं सत्तमस्स अङ्गस्स उवासगदसाणं दस अज्झयणा पण्णत्ता, पढमस्स णं, भन्ते, समणेणं जाव सम्पत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते?" ॥ २ ॥

उसकाल, उससमय पूज्य (आर्य) सुधर्म्मा स्वामी जी वहां पधारे (यावत्) जम्बू स्वामीजी (उनकी) सेवा भक्ति करके इस प्रकार बोले । "यद्यपि, हे भगवन्, श्रमण भगवान् महावीरजीने (जो मोक्षको प्राप्त होगये हैं) छटे अङ्ग (नायाधम्म कथा) ज्ञाता धर्म कथा का यह अर्थ कहा है तो, हे

भगवन्, श्रमण भगवान्ने (जो मोक्षको प्राप्त होगये हैं) सप्तम अङ्ग उपासकदशा का क्या अर्थ कहा है?"

(तब सुधर्म्मा स्वामीजीने उत्तर दिया) हे जम्बू, श्रमण भगवान्जीने (जो मोक्षको प्राप्त होगये हैं) सप्तम अङ्ग उपासकदशाके दस अध्ययन कहे हैं वह इसप्रकार हैं:— १ आनन्द २ कामदेव ३ गाथापति (ऋद्धिमद् विशेषः) चुलणीपिता ४ सुरादेव ५ चुल्लशतक ६ गाथापति कुण्डकोलिक ७ शब्दालपुत्र ८ महाशतक ९ नन्दिनीपिता १० सालिहीपिता

(जम्बूस्वामीजी बोले) "यद्यपि, हे भगवन्, श्रमण भगवान्जीने (जो मोक्षको प्राप्त कर चुके हैं) सातवें अङ्ग उपासकदशाके दश अध्ययन कहे हैं तो, हे भगवन्, (मोक्षको प्राप्त) श्रमण भगवान्जीने प्रथम अध्यायके क्या अर्थ कहे हैं?" ॥ २ ॥

एवं खलु, जम्बू, तेणं कालेणं तेणं समएणं वाणियगामे नामं नयरे होत्था । वण्णओ । तस्स वाणियगामस्स नयरस्स बहिया उत्तर पुरत्थिमे दिसीभाए दूइपलासए नामं चेइए । तत्थ णं वाणियगामे

---

१ गाथापति शब्दमूलमें है जिसका यह अर्थ होता है कि—भूमि जिसके बहुत थी और धान्यादिके विशेष "गाह" होते थे इसलिए "गाहावइ' गाथापत्ति उसे कहते हैं। इसप्रकार भी वृद्ध व्याख्या है.

नयरे जियसत्तू राया होत्था । वण्णओ । तत्थणं वाणियगामे आणन्दे नामं गाहावई परिवसइ, अड्ढे जाव अपरिभूए ॥ ३ ॥

(सुधर्म्मा स्वामीजी बोले) हे जम्बू, उसकाल, उससमय वाणिज्जग्राम नामवाला एक नगर था (वण्णओ) उस वाणिज्जग्राम नगरके बाहर उत्तर पूर्वके मध्यकी दिशामें (in the north-easterly direction) द्युतिपलाश नामक एक उद्यान था उस वाणिज्जग्राम नगरमें जितशत्रु (जैतशत्रु) राजा राज्य करता था (राजाका वर्णन अन्य राजाओंके समान समझ लेना) और आनन्द नामक एक गृहपति भी रहता था जो अति धनवान् था अर्थात् (उसकी जातिमें) उसके समान धनी वा ऐश्वर्य्ययुक्त कोई भी न था ॥ ३ ॥

तस्स णं आणन्दस्स गाहावइस्स चत्तारि हिरण्णकोडीओ निहाण पउत्ताओ, चत्तारि हिरण्णकोडीओ वड्ढिपउत्ताओ, चत्तारि हिरण्णकोडीओ पवित्थरं पउत्ताओ, चत्तारि वया दस गोसाहस्सिएणं वएणं होत्था ॥ ४ ॥

उस आनन्द गाथापतिकी चार करोड़ स्वर्ण मुद्रा भूमिमें

---

१ स्थिर कोष २ व्यापार ३ गृह सामग्री इसप्रकार धनके तीन भाग होने चाहिए.

रक्खी हुई थी, (अर्थात् इस धनको आनन्दश्रावकने पृथ्वीमें रक्खा हुआ था) चार करोड़ स्वर्ण मुद्रा उसने व्यापारमें लगाई हुई थी, चार करोड़ स्वर्णमुद्रा उसने प्रविस्तरमें लगाई हुई थी (प्रविस्तरः=धनधान्यद्विपदचतुष्पदादि) और चार यूथ, (व्रज) प्रत्येक यूथमें दशसहस्र गौ थीं, ऐसे चार वर्ग उसके पास थे ॥ ४ ॥

से णं आणन्दे गाहावइ बहूणं राईसर जाव सत्थवाहाणं बहूसु कज्जेसु यं कारणेसु य मन्तेसु य कुडुम्बेसु य गुज्झेसु य रहस्सेसु य निच्छएसु य ववहारेसु य आपुच्छणिज्जे य पडिपुच्छणिज्जे, सयस्स वि य णं कुडुम्बस्स मेढीपमाणं आहारे आलम्बणं चक्खू, मेढीभूए जाव सवकज्जवड्ढावए यावि होत्था ॥ ५ ॥

उस आनन्द गृहपतिको बहुत सारे राजा, राजकुमार वा व्यापारी लोग स्वकुटुम्बके कार्य्योंमें, कारणोंमें, निर्णयोंमें पूछते थे और गुप्त भेद, रहस्य, निश्चय व्यवहारादिमें भी उसकी मंत्रणा ग्रहण करते थे वह (आनन्द) स्वकुटुम्बका पथदर्शक, (Pillar) बल, अवलम्बन, मेढीभूत, नेत्र अर्थात्

१ "य" चकारका बोधक कहाता है.

मुख्याश्रय वा शिरोमणि था अर्थात् सर्व कार्य्योंकी उन्नतिमें एक वही मुख्य कारण था ॥ ५ ॥

तस्स णं आणन्दस्स गाहावइस्स सिवनन्दा नामं भारिया होत्था, अहीण जाव सुरूवा। आणन्दस्स गाहावइस्स इट्ठा, आणन्देणं गाहावइणा सद्धिं अणुरत्ता अविरत्ता इट्ठा, सद्द जाव पंचविहे माणुस्सए कामभोए पच्चणुभवमाणी विहरइ ॥ ६ ॥

उस आनन्द गाथापतिकी शिवनन्दा नामा स्त्री थी जो सुशीला, रूपवान् तथा (जाव=यावत् सर्व पतिव्रता स्त्रियोंके गुणोंसे युक्त थी) गृहपति आनन्दकी इष्ट थी और आनन्द गाथापतिके साथ अनुरक्त, अविरक्त और इष्ट शब्दरूप गंध रस स्पर्श पांच प्रकार के मनुष्यों के (गृह) सुखोंको भोगती हुई रहती थी ॥ ६ ॥

तस्स णं वाणियगामस्स बहिया उत्तर पुरत्थिमे दिसीभाए एत्थ णं कोल्लाए नामं सन्निवेसे होत्था, रिद्धत्थिमिय जाव पासादीए ४ ॥ ७ ॥

उस वाणिज्यग्राम के बाहर उत्तर पूर्व के मध्यकी दिशामें एक कोल्लाक नामक (संन्निवेश[1]) ग्राम था जो लम्बा, मज़बूत,

---

१ सन्निवेश एक महत् महल्लेका नामभी है जो कि लघु ग्रामकेही समान होताहै.

शोभायमान यावत् दर्शन योग्य, अच्छे स्वरूपवाला विविध रूपोंसे युक्त मनको प्रसन्न करनेवाला था ॥ ७ ॥

तत्थ णं कोल्लाए सन्निवेसे आणन्दस्स गाहावइस्स बहुए मित्त नाइनियगसयण सम्बन्धि परिजणे परिवसइ अड्ढे जाव अपरिभूए ॥ ८ ॥

उस कोल्लाक ग्राममें आनन्द गाथापतिके बहुत मित्र, कुटुम्बी, सामाजिक पुरुष वा अपने सज्जन सम्बन्धी मनुष्य निवास करते थे जो बहुत धनवान् यावत् अतुल्य ऋद्धि युक्त थे ॥ ८ ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे जाव समोसरिए । परिसा निग्गया । कूणिए राया जहा तहा जियसत्तू निग्गच्छइ २ त्ता जाव पज्जुवासइ ॥ ९ ॥

उस काल, उससमय श्रमण भगवान् महावीरजी (यावत्) वहां पधारे, नगरवासी (दर्शनार्थ) गए कूणिक राजाके समान जितशत्रुने निकलकर (यावत्) यथा विधि वन्दना नमस्कार करके सेवा भक्ति की ॥ ९ ॥

तएणं से आणन्दे गाहावइ इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे, "एवं खलु समणे जाव विहरइ, तं महा-

फलं गच्छामि णं जाव पज्जुवासामि" एवं सम्पेहेइ २ त्ता एहाए सुद्धप्पावेसाइं जाव अप्पमहग्घाभरणालङ्किय सरीरे सयाओ गिहाओ पडिणिक्खमइ २ त्ता सकोरेण्टमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं मणुस्सवग्गुरापरिक्खित्ते पायविहार चारेणं वाणियगामं नयरं मज्भं मज्भेणं निग्गच्छइ, २ त्ता जेणामेव दुइपलासे चेइए, जेणेव समणे भगवं महावीरे, तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ, २ त्ता वन्दइ नमंसइ जाव पज्जुवासइ ॥ १० ॥

उस गाथापति आनन्दने, इस समाचार के बतलाये जानेपर, मनमें ऐसा विचार किया "निश्चयही (ठीक) श्रमण भगवान् महावीरजी यहां पधारे हैं यह बड़ा शुभ वा मंगलदायक वृत्तांत है इसकारण मैं जाता हूं और (वंदना नमस्कार करके) सेवा भक्ति करता हूं" ऐसा विचार कर स्नान करके, सुन्दर वस्त्र पहने और यथाविधि हलके और महंगे आभरण शरीरपर आलंकृत करके अपने घरसे निकला जिससमय कोरण्ट के पुष्पोंकी मालासे अलंकृत छतरी उसके शिरोपरि सुशोभित थी और मनुष्योंके वर्गोंसे

अर्थात् बहुत मनुष्योंसे वह घिरा हुआ था। इसप्रकार वाणि-
ज्यग्राम नगरके बीचोबीच पांवसे चलकर जहां द्युतिपलाश
उद्यान था और जहां श्रमण भगवान् महावीरजी विराजमान
थे, वहां गया। वहां पहुंचकर (हाथोंद्वारा) बाईं तरफसे
दहिनी तरफ तक तीन वार वन्दना नमस्कार करके सेवा
भक्ति अर्थात् प्रदक्षणा की ॥ १० ॥

तएणं समणे भगवं महावीरे आणन्दस्स गाहा-
वइस्स तीसे य महइ महालियाए परिसाए जाव
धम्मकहा। परिसा पडिगया राया य गए ॥ ११ ॥

तब श्रमण भगवान् महावीरजीने आनन्द गाथापतिको
तथा उसके साथ आये हुये बड़े २ मनुष्यों को धर्मोपदेश
दिया। तदनन्तर सब मनुष्य स्वगृहोंको चलेगये और राजा
भी लौट गया ॥ ११ ॥

तएणं से आणन्दे गाहावइ समणस्स भगवओ
महावीरस्स अन्तिए धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठ तुट्ठ
जाव एवं वयासी। "सद्दहामि णं, भन्ते, निग्गन्थं
पावयणं, पत्तियामि णं, भन्ते, निग्गथं पावयणं,
रोएमि णं, भन्ते, निग्गन्थं पावयणं, एवमेयं भन्ते,
तहमेयं भन्ते, अवितहमेयं भन्ते, इच्छियमेयं भन्ते,

पडिच्छियमेयं भन्ते, इच्छियपडिच्छियमेयं भन्ते, से जहेयं तुब्भे वयह, त्तिकट्टु जहाणं देवाणुप्पियाणं अन्तिए बहवे राईसरतलवरमाडम्बिय कोडुम्बिय सेट्ठि सत्थवाहप्पभिइया मुण्डाभवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वइया, नो खलु अहं तहा संचाएमि मुण्डे जाव पव्वइत्तए । अहणं देवाणुप्पियाणं अन्तिए पंचाणुव्वइयं सत्तसिक्खावइयं दुवालसविहं-गिहिधम्मं पडिवज्जिस्सामि" । अहासुहं, देवाणुप्पिया, मा पडिबन्धं करेह ॥ १२ ॥

तब आनन्द गाथापतिने श्रमण भगवान् महावीरजीके पास धर्म्मको ध्यानसे सुनकर और मनमें प्रसन्न होकर ऐसे कहा । "हे भगवन्, मैं जिनशासनमें श्रद्धा रखता हूं और निर्ग्रन्थियोंके (साधु) वचनोंको स्वीकार करता हूं इसके उपरान्त, हे भगवन्, मैं जिन शासनसे प्रसन्नभी हुआ हूं. यह (निर्ग्रंथके प्रवचन कथनानुसार) ऐसेही हैं, यथार्थ हैं अतः सत्य हैं हे भगवन्, मैं इसकी इच्छा करता हूं तथा मैं इसको अंगीकार और स्वीकारभी करता हूं, वह यथार्थ है जो आपने कहा है यद्यपि, हे देवानुप्रिय! आपके पास बहुत राजा, राजकुमार, महाकुलीन, राज्याधिकारी, नगराधिकारी, महाजन

वा व्यापारी मनुष्य मुण्डित (मुनि) हुये हैं और उन्होंने गृहस्थको त्याग कर साधू वृत्तिको अंगीकार किया है तदपि निश्चयसे मैं साधु होनेके अर्थात् गृहस्थ को त्याग कर साधूपन स्वीकार करनेके असमर्थ हूं इसलिये हे देवानुप्रिय! (भगवन्) मैं आपके सामने पांच अणुव्रत सात शिक्षा व्रत अर्थात् १२ बारह व्रतयुक्त गृहस्थ धर्मको ग्रहण करता हूं" तब महावीरजीने उत्तर दिया कि—हे देवताओंको प्रिय! इस काममें देरी मत करो ॥ १२ ॥

तए णं से आणन्दे गाहावइ समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तिए तप्पढमयाए थूलगं पाणाइवायं पच्चक्खाइ। "जावज्जीवाए दुविहं तिविहेणं न करेमि न कारवेमि मणसा वयसा कायसा" ॥ १३ ॥

तदानन्तर उस गृहपति आनन्दने श्रमण भगवान् महावीरजीके पास सबसे पहिले स्थूल प्राणातिपातका प्रत्याख्यान किया और कहा कि मैं जीवन पर्यन्त द्विविध वा तीन योग और मन, वचन, काया से (जीव हिंसा) न करूंगा न कराऊंगा ॥ १३ ॥

तयाणन्तरं च णं थूलगं मुसावायं पच्चक्खाइ। "जावज्जीवाए दुविहं तिविहेणं न करेमि न कारवेमि मणसा वयसा कायसा" ॥ १४ ॥

तदुपरान्त उसने स्थूल मृषावाद (असत्य) का प्रत्याख्यान किया और कहा कि मैं जीवन पर्यन्त द्विविध, तीन योग और मन, वचन, कायासे (मिथ्या वचनका सेवन) न करूंगा न कराऊंगा ॥ १४ ॥

तयाणन्तरं च णं थूलगं अदिण्णादाणं पच्चक्खाइ । "जावज्जीवाए दुविहं तिविहेणं न करेमि न कारवेमि मणसा वयसा कायसा" ॥ १५ ॥

इसके अनन्तर उसने स्थूल अदत्तादान (चोरी) का प्रत्याख्यान किया और कहा कि मैं जीवन पर्यन्त द्विविध, तीन योग और मन, वचन, कायासे (चोरी) न करूंगा न कराऊंगा ॥ १५ ॥

तयाणन्तरं च णं सदारसन्तोसीए परिमाणं करेइ । "नन्नत्थ एक्काए सिवनन्दाए भारियाए, अवसेसं सव्वं मेहुणविहिं पच्चक्खामि [1]३" ॥ १६ ॥

तदानन्तर स्वदारसन्तोष अर्थात्, स्वस्त्रीके साथ संतुष्टि का परिमाण किया । और कहा कि मैं एक शिवनन्दा भार्याके सिवा अवशेष सर्व प्रकारकी मैथुन विधिका मनवचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हूं अर्थात् इसप्रकार ब्रह्मचर्य व्रत धारण करता हूं ॥ १६ ॥

---

१ "३" अंक 'मणसा वयसा कायसा इन तीनों शब्दोंका बोधक है

तयाणन्तरं च णं इच्छाविहिपरिमाणं करेमाणे, हिरण्णसुवण्णविहिपरिमाणं करेइ । "नन्नत्थ चउहिंहिरण्णकोडीहिं निहाणपउत्ताहिं, चउहिं वड्ढि पउत्ताहिं, चउहिं पवित्थर पउत्ताहिं, अवसेसं सव्वं हिरण्णसुवण्णविहिं पच्चक्खामि ३" ॥ १७ ॥

तदुपरान्त उसने इच्छा (तृष्णा) की विधिका परिमाण करते हुए हिरण्यसुवर्णकी विधिका परिमाण किया । और कहा कि मैं चार करोड़ निधान प्रयुक्त सुवर्ण मुद्रा, चार करोड़ वृद्धि[1] प्रयुक्त सुवर्ण मुद्रा और चार करोड़ प्रविस्तर प्रयुक्त सुवर्ण मुद्राके सिवा अवशेष सब हिरण्यसुवर्णकी विधिका मन, बचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हूं ॥ १७ ॥

तयाणन्तरं च णं चउप्पयविहि परिमाणं करेइ, "नन्नत्थ चउहिं वएहिं दसगोसाहस्सिएणं वएणं अवसेसं सव्वं चउप्पयविहिं पच्चक्खामि ३" ॥ १८ ॥

तदानन्तर उसने चतुष्पद पशुओंकी विधिका परिमाण किया, और कहा कि मैं दशसहस्र गौओं का एक वर्ग, ऐसे चार वर्गोंके सिवा अवशेष सब चतुष्पद विधिका मन, बचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हूं ॥ १८ ॥

---

१ जो धन वृद्धिके लिये ब्याजआदिपर दिया जाता है वह 'वृद्धिप्रयुक्त' धन कहलाताहै.

तयाणन्तरं च णं खेत्तवत्थु विहिपरिमाणं करेइ । "नन्नत्थ पञ्चहिं हलसएहिं नियत्तणसइएणं हलेणं, अवसेसं सव्वं खेत्तवत्थुविहिं पच्चक्खामि ३" ॥१९॥

तदुपरान्त उसने क्षेत्र और गृहकी पृथ्वीकी विधिका परिमाण किया । और कहा कि मैं पांचसौ ५०० हल, प्रत्येक हलकी १०० निवर्तन पृथ्वी, के सिवाय अवशेष सब क्षेत्र और गृहकी पृथ्वी की विधिका मन, बचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हूं ॥ १९ ॥

तयाणन्तरं च णं सगडविहिपरिमाणं करेइ । "नन्नत्थपञ्चहिं सगडसएहिं दिसायत्तिएहिं, पञ्चहिं सगडसएहिं संवाहणिएहिं, अवसेसं सव्वं सगडविहिं पच्चक्खामि ३" ॥ २० ॥

तदानन्तर उसने शकटकी विधिका परिमाण किया । और कहा कि मैं पांचसौ शकट (गड्डे) दिशायात्रिक, और पांचसौ शकट सांवाहनिक[1]का आगार रखकर अवशेष सब शकटकी विधिका मन, बचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हूं ॥ २० ॥

---

१ घरका कार्य करनेके लिये अर्थात् क्षेत्रोंसे तृण काष्ट धान्यादि लानेके लिये जो शकट (गड्डे) आनन्द श्रावकके पास थे वह सांवाहनिक शकट कहलाते थे और जो अन्यदेश देशान्तरोंको व्यापारार्थ जाते थे वह दिशायात्रिक (गड्डे) कहलाते थे।

तयाणन्तरं च णं वाहणविहि परिमाणं करेइ । "नन्नत्थ चउहिं वाहणेहिं दिसायत्तिएहिं, चउहिं वाहणेहिं संवाहणिएहिं, अवसेसं सव्वं वाहणविहिं पच्चक्खामि ३" ॥ २१ ॥

इसके उपरान्त उसने वाहन (किश्ती, वेड़ी) की विधिका परिमाण किया और कहा कि मैं चार बडे वाहन (पोत–जहाज) दिशायात्रिक, और चार वाहन सांवाहनिकका आगार रखकर अवशेष सब वाहनकी विधिका मन, बचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हूं ॥ २१ ॥

तयाणन्तरं च णं उवभोगपरिभोगविहिं पच्चक्खाएमाणे, उल्लणियाविहिपरिमाणं करेइ । "नन्नत्थ एगाए गन्धकासाईए, अवसेसं सव्वं उल्लणियाविहिं पच्चक्खामि ३" ॥ २२ ॥

इसके अनन्तर उपभोग वा परिभोग की विधिका प्रत्याख्यान करते हुये जललूषणवस्त्र (तौलिया—शरीरपूंछनवस्त्र) की विधिका परिमाण किया और कहा कि मैं एक गन्धकाषायी (सुगन्धित और कषायसे रक्त) वस्त्रके सिवा अवशेष सब जललूषण वस्त्रों का मन, बचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हूं ॥ २२ ॥

तयाणन्तरं च णं दन्तवणविहिपरिमाणं करेइ । "नन्नत्थ एगेणं अल्ललट्ठीमहुएणं, अवसेसं दन्तवणविहिंपच्चक्खामि ३" ॥ २३ ॥

तदानन्तर उसने दन्तमलापकर्षण काष्ठ की विधिका परिमाण किया और कहा कि मैं एक आर्द्र मधुर रससेयुक्त यष्टीके सिवाय सब दन्तपावन की विधिका मन, बचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हूं ॥ २३ ॥

तयाणन्तरं च णं फलविहिपरिमाणं करेइ । "नन्नत्थ एगेणं खीरामलएणं, अवसेसं फलविहिं पच्चक्खामि ३" ॥ २४ ॥

तदुपरान्त उसने फलकी विधिका परिमाण किया । और कहा कि मैं एक क्षीरके समान मधुर अबद्धास्थिक (आमले) फलके सिवा शेष सब फलों की विधिका मन, बचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हूं ॥ २४ ॥

तयाणन्तरं च णं अब्भङ्गणविहि परिमाणं करेइ । "नन्नत्थ सयपागसहस्स पागेहिं तेल्लेहिं, अवसेसं अब्भङ्गणविहिं पच्चक्खामि ३" ॥ २५ ॥

तत्पश्चात् उसने अभ्यंग (तैलादि) की विधिका परिमाण किया और कहा कि मैं शत या सहस्र द्रव्योंसे

निर्मित तैलके सिवा शेष अभ्यंग की विधिका मन, बचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हूं ॥ २५ ॥

तयाणन्तरं च णं उव्वट्टणविहि परिमाणं करेइ। "नन्नत्थ एगेणं सुरहिणा गन्धट्टएणं, अवसेसं उव्वट्टणविहिं पच्चक्खामि ३" ॥ २६ ॥

तदानन्तर उसने उद्वर्तन की विधि का परिमाण किया। और कहा कि मैं एक पुष्टीकारक सुगन्धयुक्त गोधूमचूर्ण (आटा) के सिवाय शेष सब उद्वर्तन की विधिका मन, बचन और कायासे त्याग करता हूं ॥ २६ ॥

तयाणन्तरं च णं मज्जणविहि परिमाणं करेइ। "नन्नत्थ अट्ठहिं उट्टिएहिं उदगस्स घडएहिं, अवसेसं मज्जणविहिं पच्चक्खामि ३" ॥ २७ ॥

तदुपरान्त उसने मज्जन (स्नान) की विधि का परिमाण किया। और कहा कि मैं अष्ट उष्ट्रिका जलसे युक्त एक घड़े के सिवा शेष मज्जन विधिका मन, बचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हूं ॥ २७ ॥

तयाणन्तरं च णं वत्थविहि परिमाणं करेइ। "नन्नत्थ एगेणं खोमजुयलेणं, अवसेसं वत्थविहिं पच्चक्खामि ३" ॥ २८ ॥

तदानन्तर उसने वस्त्रकी विधिका परिमाण किया। और कहा कि मैं कार्पासिक युगल (कपासका जोड़ा) के सिवा शेष वस्त्रविधि का मन, बचन और कायासे त्याग करता हूं ॥२८॥

तयाणन्तरं च णं विलेवणविहि परिमाणं करेइ। "नन्नत्थ अगरु कुंकुम चन्दण मादिएहिं, अवसेसं विलेवणविहिं पच्चक्खामि ३" ॥ २९ ॥

तत् पश्चात् उसने विलेपन की विधिका परिमाण किया। और कहा कि मैं अगरु केसर वा चन्दनादि गन्धद्रव्योंके अन्यत्र शेष विलेपन की विधिका मन, बचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हूं ॥ २९ ॥

तयाणन्तरं च णं पुप्फविहि परिमाणं करेइ। "नन्नत्थ एगेणं सुद्धपउमेणं मालइकुसुमदामेणं वा, अवसेसं पुप्फविहिं पच्चक्खामि ३" ॥ ३० ॥

तदानन्तर उसने पुष्पविधिका परिमाण किया। और कहा कि मैं शुद्धपद्म और मालती कुसुमोंकी दामन् (फूलमाला) के अन्यत्र अवशेष पुष्पविधिका मन बचन और कायासे त्याग करता हूं ॥ ३० ॥

तयाणन्तरं च णं आभरणविहि परिमाणं करेइ। "नन्नत्थ मट्ठकण्णेज्जएहिं नाममुद्दाए य, अवसेसं आभरणविहिं पच्चक्खामि ३" ॥ ३१ ॥

तत् पश्चात् आनन्दने भूषणविधि का परिमाण किया। और कहा कि मैं मृष्ट कर्णौजक (कर्णाभरण) और नामांकित मुद्राके अन्यत्र शेष भूषणविधिका मन, बचन और कायासे त्याग करता हूं॥ ३१॥

तयाणन्तरं च णं धूवणविहि परिमाणं करेइ। "नन्नत्थ अगरु तुरुक्क धूव मादिएहिं, अवसेसं धूवणविहिं पच्चक्खामि ३" ॥ ३२॥

इसके उपरान्त उसने धूपविधिका परिमाण किया। और कहा कि मैं अगरु और तुरुष्कादि (शल्लकी लक्षण धूप) धूपके अन्यत्र शेष सब धूप विधिका मन, बचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हूं॥ ३२॥

तयाणन्तरं च णं भोयणविहि परिमाणं करेमाणे, पेज्जविहि परिमाणं करेइ। "नन्नत्थ एगाए कट्ठपेज्जाए, अवसेसं पेज्जविहिं पच्चक्खामि ३" ॥३३॥

तदानन्तर उसने भोजन विधिका परिमाण करते हुये पेयाहार विधि का परिमाण किया और कहा कि मैं एक कृष्टपेय (मुद्गादियूषो घृततलिततण्डुलपेय= Water, milk or rice-gruel) के अन्यत्र शेष पेयाहार विधि का प्रत्याख्यान मन बचन और कायासे करता हूं॥ ३३॥

तयाणन्तरं च णं भक्खविहि परिमाणं करेइ।

"नन्नत्थ एगेहिं घयपुरोहिं खण्ड खज्जएहिं वा, अव-
सेसं भक्खविहिं पच्चक्खामि ३" ॥ ३४ ॥

तदानन्तर उसने भक्तविधि का परिमाण किया । और कहा कि मैं घृतपूर (घेवर) और खण्ड खाद्यकके अन्यत्र शेष भक्तविधि का मन वचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हूं ॥ ३४ ॥

तयाणन्तरं च णं ओदणविहि परिमाणं करेइ । "नन्नत्थ कलमसालि ओदणेणं, अवसेसं ओदणविहिं पच्चक्खामि ३" ॥ ३५ ॥

तदुपरान्त उसने ओदनविधि का परिमाण किया । और कहा कि मैं एक कलमशालि ओदन (पूर्व देशमें ओदन की एक प्रसिद्ध किसम) के अन्यत्र शेष ओदनविधि का मन वचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हूं ॥ ३५ ॥

तयाणन्तरं च णं सूवविहि परिमाणं करेइ । "नन्नत्थ कलायसूवेण वा मुग्ग मास सूवेण वा, अवसेसं सूवविहिं पच्चक्खामि ३" ॥ ३६ ॥

तदानन्तर उसने सूपविधि (दालकी विधि) का परिमाण किया और कहा कि मैं कलाय सूप (एक जाति का चणाकाकार धान्य विशेष) और मुद्गमाषसूप (मूंग और म्मां

की दाल) के अन्यत्र शेष सूप विधि का मन वचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हूं ॥ ३६ ॥

तयाणन्तरं च णं घयविहि परिमाणं करेइ। "नन्नत्थ सारइएण गोघय मण्डेणं, अवसेसं घयविहिं पच्चक्खामि ३" ॥ ३७ ॥

तदुपरान्त उसने घृतविधि का परिमाण किया। और कहा कि मैं शारदिक (शरत्कालमें संग्रह किया हुआ) गोघृतसारके सिवा शेष घृतविधि का मन, वचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हूं ॥ ३७ ॥

तयाणन्तरं च णं सागविहि परिमाणं करेइ। "नन्नत्थ वत्थुसाएण वा सुत्थियसाएण वा मण्डुक्कियसाएण वा, अवसेसं सागविहिं पच्चक्खामि३"॥३८॥

तदानन्तर उसने शाकविधि का परिमाण किया और कहा कि मैं वास्तुशाक, सौवस्तिक शाक, और मण्डूकिका (मटरविशेष) शाक के अन्यत्र शेष शाकविधि का मन, वचन और कायासे प्रत्याख्यान करताहूं ॥ ३८ ॥

तयाणन्तरं च णं माहुरयविहि परिमाणं करेइ। "नन्नत्थ एगेणं पालङ्गामाहुरएणं, अवसेसं माहुरयविहिं पच्चक्खामि ३" ॥ ३९ ॥

तदुपरान्त उसने माधुरक विधि का परिमाण किया। और कहा कि मैं एक पालङ्कथामाधुरक (वल्लीफल) के व्यतिरेक शेष माधुरक विधि का मन बचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हूं ॥ ३९ ॥

तयाणन्तरं च णं जेमणविहि परिमाणं करेइ। "नन्नत्थ सेहंवदालियंवेहिं, अवसेसं जेमणविहिं पच्चक्खामि ३" ॥ ४० ॥

तदानन्तर उसने जेमनविधि (भोजन विधि) का परिमाण किया और कहा कि मैं सेधाम्लदालिका (बड़े—भल्ले) के अन्यत्र शेष जेमन विधि का मन बचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हूं ॥ ४० ॥

तयाणन्तरं च णं पाणियविहि परिमाणं करेइ। "नन्नत्थ एगेणं अन्तलिक्खोदएणं, अवसेसं पाणियविहिं पच्चक्खामि ३" ॥ ४१ ॥

तदुपरान्त उसने पानीयविधि का परिमाण किया ॥ और कहा कि मैं एक अन्तरिक्ष उदक (वर्षा जल) के अन्यत्र शेष पानीय विधिका मन बचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हूं ॥ ४१ ॥

तयाणन्तरं च णं मुहवासविहि परिमाणं करेइ।

"नन्नत्थ पञ्चसोगन्धिएणं तम्बोलेणं, अवसेसं मुह-वासविहिं पच्चक्खामि ३" ॥ ४२ ॥

तदुपरान्त उसने मुखवास विधि का परिमाण किया और कहा कि मैं पांच सुगन्धि युक्त द्रव्यों से मिलित ताम्बूल (पान) के अन्यत्र शेष मुखवास विधि का मन, बचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हूं ॥ ४२ ॥

तयाणन्तरं च णं चउव्विहिं अणट्ठा दण्डं पच्च-क्खाइ । तं जहा । अवज्झाणायरियं, पमायायरियं, हिंसप्पयाणं, पावकम्मोवएसे ॥ ४३ ॥

तदानन्तर उसने चार प्रकारके अनर्थदण्ड[1] का त्याग किया। वह यह हैं। १ द्रोहचिन्तकध्यान, (मनमें अनिष्ट विचारकरना) २ प्रमत्ताचार (प्रमाद करना) ३ शस्त्रों का दान, ४ पापकर्म का उपदेश देना ॥ ४३ ॥

इह खलु "आणन्दा" इ समणे भगवं महावीरे आणन्दं समणोवासगं एवं वयासी । "एवं खलु, आणन्दा, समणोवासएणं अभिगयजीवाजीवेणं जाव अणइक्कमणिज्जेणं सम्मत्तस्स पञ्च अइयारा पेयाला जाणियव्वा, न समायरियव्वा । तं जहा ।

---

१ धर्म, अर्थ, काम की अस्तिरहित जो दण्ड है उसको अनर्थ दण्ड कहते हैं ।

सङ्का, कङ्खा, विइगिच्छा, परपासण्डपसंसा, परपासण्डसंथवो ॥ ४४ ॥

तब श्रमण भगवान् महावीर जी आनन्द श्रमणोपासक को ऐसे बोले । हे आनन्द! जीव अजीव के भेद के ज्ञाता यावत् अनतिक्रमणीय श्रद्धायुक्त श्रमणोपासक को सम्यक्त्व के पांच प्रधान अतिचार जानने चाहियें परन्तु उनका समाचरण न करना चाहिये । वह अतिचार यह हैं । १ संशय करना २ कांक्षा अर्थात् अन्यान्य दर्शन ग्रहण करना ३ विचिकित्सा अर्थात् फल और सत्पुरुषों के कथनों में सत्यासत्य की शंका करना ४ परपाषण्डप्रशंसा अर्थात् अन्य पाषण्डी पुरुषों की ऐसी प्रशंसा करना जिस से श्रोताओं को उनकी रुचि उत्पन्न हो ५ परपाषण्डसंस्तव अर्थात् धर्म से पतित वा नास्तिकादि पाषंडी पुरुषों के साथ अति मित्रता वा प्रेम उत्पन्न करना ॥ ४४ ॥

तयाणन्तरं च णं थूलगस्स पाणाइवाय वेरमणस्स समणोवासएणं पञ्च अइयारा पेयाला जाणियव्वा, न समायरियव्वा । तं जहा । बन्धे, वहे, छविच्छेए, अइभारे, भत्तपाणवोच्छेए ॥ ४५ ॥

तदानन्तर श्रमणोपासक को स्थूल प्राणातिपात के पाच अतिचार जानने चाहिये परन्तु उनका समाचरण नहीं करना

चाहिये। वह यह हैं। १ बन्धन अर्थात् कठिन बंधनों से बांधना २ यष्ट्यादि से ताड़न करना ३ शरीरावयवच्छेद अर्थात् अंगोपाङ्ग छेदन करना ४ पशु आदि की शक्ति न देखकर अति भार आरोपण करना ५ अशनपानीयाप्रदान अर्थात् अन्न पानी न देना ॥ ४५ ॥

तयाणन्तरं च णं थूलगस्स मुसावाय वेरमणस्स पञ्च अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा। तं जहा। सहसाभक्खाणे, रहसाभक्खाणे, सदारमन्तभेए, मोसोवएसे, कूडलेहकरणे ॥ ४६ ॥

तदुपरान्त स्थूल मृषावादके पांच अतिचार जानने चाहियें परन्तु उनका समाचरण नहीं करना चाहिये। वह इस प्रकार हैं। १ सहसाभ्याख्यान अर्थात् विनाविचारे दोषआरोपण करना २ रहस्य अर्थात् गुप्तवार्ता प्रकाश करना ३ स्वभार्या का मन्त्र अर्थात् भेद प्रकाश करना ४ मिथ्याउपदेश देना ५ कूटलेख अर्थात् खोटा लेख लिखना ॥ ४६ ॥

तयाणन्तरं च णं थूलगस्स अदिन्नादाण वेरमणस्स पञ्च अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा। तं जहा। तेणाहडे, तक्करप्पओगे, विरुद्धरज्जाइक्कमे, कूडतुल्लकूडमाणे, तप्पडिरूवगववहारे [illegible] ॥

तदानन्तर स्थूल अदत्तादान (चोरी) के पांच अतिचार जानने चाहियें परन्तु उनका समाचरण नहीं करना चाहिये। वह इस प्रकार हैं। १ स्तेनाहृत अर्थात् चौरकी चुराई हुई वस्तु लेना, २ तस्करप्रयोग अर्थात् चोर की रक्षा वा सहायता करना ३ विरुद्धराज्यातिक्रम अर्थात् राज्यके नियमों के विरुद्ध कर्म करना ४ कूटतुलाकूटमान अर्थात् खोटा तोलना और खोटा मापना (अधिक लेना न्यून देना) ५ प्रतिरूपक व्यवहार अर्थात् शुद्ध में अशुद्ध वस्तु एकत्र करके विक्रय करना ॥ ४७ ॥

तयाणन्तरं च णं सदारसन्तोसीए पञ्च अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा। तं जहा। इत्तरियपरिग्गहियागमणे, अपरिग्गहियागमणे, अणङ्गकीडा, परविवाहकरणे, कामभोगा तिव्वाभिलासे ॥ ४८ ॥

तदानन्तर स्वदारसन्तुष्टि के पांच अतिचार जानने तो चाहियें परन्तु उनका समाचरण न करना चाहिये। वह यह हैं। १ लघु व्यवस्था युक्त स्व स्त्री के साथ संभोग करना २ वाग्दत्ता स्त्री के साथ भोग भोगना ३ अनंगक्रीड़ा अर्थात् काम के वश होकर कुचेष्टा द्वारा वीर्यपात करना ४ पर

---

१ यह अर्थ जैन सिद्धांतानुसार लिखता हूं किन्तु "पर विवाह करणे" का अर्थ इस प्रकार होना भी सम्भव है यथा—'पर पुरुषों के विवाह का प्रबंध करना' या 'पर जाति की स्त्री के साथ विवाह करना'।

पुरुषों की मांग का अपने साथ विवाह करना ५ काम भोग की तीव्र अभिलाषा करना तथा ऋतुगामी न होकर विषयों में ही लंपट रहना ॥ ४८ ॥

तयाणन्तरं च णं इच्छा परिमाणस्स समणोवासएणं पञ्च अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा । तं जहा । खेत्तवत्थुपमाणाइक्कमे, हिरण्णसुवण्णपमाणाइक्कमे, दुपयचउप्पयपमाणाइक्कमे, धणधन्नपमाणाइक्कमे, कुवियपमाणाइक्कमे ॥ ४९ ॥

तदुपरान्त श्रमणोपासक को इच्छा परिमाणके पांच अतिचार जानने चाहियें परन्तु उनका समाचरण नहीं करना चाहिये । वह निम्नलिखित हैं । १ क्षेत्र वस्तु के प्रमाण को अतिक्रम करना २ हिरण्य सुवर्ण के प्रमाण को अतिक्रम करना ३ द्विपद और चतुष्पद पशुओं के प्रमाण को अतिक्रम करना ४ धनधान्य के प्रमाण को अतिक्रम करना ५ कुप्य पदार्थों के प्रमाण को अतिक्रम करना अर्थात् गृहसामग्री के प्रमाण को उल्लंघन करना ॥ ४९ ॥

तयाणन्तरं च णं दिसिवयस्स पञ्च अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा । तं जहा । उड्ढदिसिपमाणाइक्कमे, अहोदिसिपमाणाइक्कमे, तिरियदिसिपमाणाइक्कमे, खेत्त वुड्ढी, सइअन्तरद्धा ॥ ५० ॥

तदानन्तर दिग्व्रत के पांच अतिचार जानने योग्य हैं परन्तु ग्रहण करने योग्य नहीं हैं। वह इस प्रकार हैं। १ ऊर्ध्व अर्थात् ऊंची दिशा के प्रमाण का अतिक्रम करना २ अधो (नीची) दिशा के प्रमाण का अतिक्रम करना ३ तिर्यग् अर्थात् मध्य दिशा के प्रमाण का अतिक्रम करना ४ क्षेत्र की वृद्धि करना ५ स्मृत्यन्तर्धा अर्थात् शंका होने पर भी प्रमाण से अधिक गमन करना ॥ ५० ॥

तयाणन्तरं च णं उवभोगपरिभोगे दुविहे पण्णत्ते। तं जहा। भोयणओ य कम्मओ य। तत्थ णं भोयणओ समणोवासएणं पञ्च अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा। तं जहा। सचित्ताहारे, सचित्तपडिबद्धाहारे, अप्पउलिओसहिभक्खणाया, दुप्पउलिओसहि भक्खणाया, तुच्छोसहिभक्खणाया। कम्मओ णं समणोवासएणं पण्णरस कम्मादाणाइं जाणियव्वाइं, न समायरियव्वाइं। तं जहा। इङ्गालकम्मे, वणकम्मे, साडीकम्मे, भाडीकम्मे, फोडीकम्मे, दन्तवाणिज्जे, लक्खावाणिज्जे, रसवाणिज्जे, विसवाणिज्जे, केसवाणिज्जे, जन्तपीलणकम्मे, निल्लञ्छणकम्मे, दव-

ग्गिदावणया, सरदहतलावसोसणया, असईजणपो-
सणया ॥ ५१ ॥

तदुपरान्त उपभोग परिभोग द्वि प्रकार के कहे हैं। वह इस प्रकार हैं। १ भोजन सम्बन्धि २ कर्म सम्बन्धि। इस कारण श्रमणोपासक को भोजन के पांच अतिचार जानने चाहियें परन्तु उनका आचरण नहीं करना चाहिये। वह यह हैं। १ सचित्त वस्तु का आहार करना २ सचित्त प्रतिबद्ध का आहार करना ३ अप्रज्वलित अर्थात् अपक्क औषधि का भक्षण करना ४ दुष्प्रज्वलित अर्थात् दुःपक्क औषधि का आहार करना ५ तुच्छ औषधि का आहार करना।

श्रमणोपासक को कर्म के पञ्चदश १५ कर्मादान जानने योग्य हैं परन्तु ग्रहण करने योग्य नहीं हैं यथा—

१ अङ्गार कर्म (कोयलों का व्यापार) २ वनकर्म (वन कटवाना) ३ शकट कर्म (गाड़ी विक्रय) ४ भाटक कर्म (पशुओं को भाड़े पर देना) ५ स्फोट कर्म (कुद्दाल हलादि से भूमि को दारण करना) ६ दन्तवाणिज्य अर्थात् हस्ती आदि के दांतों का व्यापार ७ लाक्षावाणिज्य अर्थात् लाख तथा मजीठा का व्यापार ८ रस वाणिज्य अर्थात् घृत, तेल, गुड़ मदिरादि का व्यापार ९ विष वाणिज्य १० केश वाणिज्य ११ यन्त्रपीड़न कर्म (कोल्हू ईख पीड़नादि कर्म) १२ नि-

लाञ्छन कर्म अर्थात् पशुओं को नपुंसक करना वा अवय-वों का छेदन भेदन करना १३ दवाग्नि दान (वनादि जला-ना) १४ सरोहृदतड़ागपरिशेषणता अर्थात् जलाशयों के जल को शोषित करना १५ असतीजनपोषणता कर्म अर्थात् हिंसक जीवों का पालन पोषण करना ॥ ५१ ॥

तयाणन्तरं च णं अणट्ठा दण्डवेरमणस्स समणो-वासएणं पञ्च अइयारा जाणियव्वा, न समायरिय-व्वा । तं जहा । कन्दप्पे, कुक्कुए, मोहरिए, सञ्जुत्ता-हिगरणे, उवभोगपरिभोगाइरित्ते ॥ ५२ ॥

तदानन्तर श्रमणोपासक को अनर्थदण्ड के पांच अतिचार जानने चाहियें परन्तु उनका समाचरण नहीं करना चाहिये। यथा—१ कन्दर्प अर्थात् कामजन्य वार्त्ताओं का करना २ कौत्कुच्य अर्थात् मुख और नयनादि से उपहास्य करना ३ मौखर्य अर्थात् मर्मयुक्त बचन बोलना ४ प्रमाण से अधिक उपकरण वा शस्त्रादि का संचय करना ५ उपभोग और परि-भोग का प्रमाण से अधिक संग्रह करना ॥ ५२ ॥

तयाणन्तरं च णं सामाइयस्स समणोवासएणं पञ्च अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा । तं जहा । मणदुप्पडिहाणे, वयदुप्पडिहाणे, कायदुप्प-

डिहाणे, सामाइयस्स सइअकरणया, सामाइयस्स अणवट्ठियस्स करणया ॥ ५३ ॥

तदुपरान्त श्रमणोपासक को सामायिक के पांच अतिचार जानने चाहियें परन्तु उनका आचरण नहीं करना चाहिये। वह मिम्नलिखित हैं। १ मन का दुष्ट प्रणिधान करना अर्थात् मन से खोटाविचार करना २ वचन का दुष्ट प्रणिधान करना ३ काया का दुष्ट प्रणिधान करना ४ सामायिक की [1]स्मृति न करना ५ अल्पकालीन सामायिक करना अर्थात् सामायिक के काल को पूरा न करना ॥ ५३ ॥

तयाणन्तरं च णं [2]देसावगासियस्स समणोवासएणं पञ्च अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा। तं जहा। आणवणप्पओगे, पेसवणप्पओगे, सद्दाणुवाए, रूवाणुवाए, बहियापोग्गल पक्खेवे ॥ ५४ ॥

तदुपरान्त श्रमणोपासक को देशावकाशिक के पांच अतिचार जानने चाहियें परन्तु उनका समाचरण नहीं करना चाहिये। यथा—१ आज्ञापन प्रयोग अर्थात् बाहिर की वस्तु आज्ञा करके मंगवाना २ प्रेष्यपन प्रयोग अर्थात् प्रमाण की

---

१ "इस समय मुझे सामायिक करनी उचित थी अथवा मैं ने की है या नहीं" इस प्रकार की स्मृति न करना यह चतुर्थ अतिचार है २ षष्ठम व्रत में पूर्वादि दिशाओं के कृत प्रमाणों से नित्यम् प्रति स्वल्प करते रहना उसी का नाम देशावकाशिक है।

हुई भूमिका से बाहिर वस्तु भेजना ३ शब्दानुवाद अर्थात् शब्द करके अपने आपको प्रगट करना ४ रूपानुवाद अर्थात् रूप करके अपने आपको प्रसिद्ध करना ५ लेष्टादि पुद्गल प्रक्षेप करके अपने आपको प्रगट करना ॥ ५४ ॥

तयाणन्तरं च णं पोसहोववासस्स समणोवासएणं पञ्च अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा । तं जहा । अप्पडिलेहियदुप्पडिलेहियसिज्जासंथारे, अप्पमज्जियदुप्पमज्जियसिज्जासंथारे, अप्पडिलेहिय दुप्पडिलेहिय उच्चारपासवण भूमी, अप्पमज्जियदुप्पमज्जिय उच्चारपासवण भूमी, पोसहोववासस्स सम्मं अणणुपालणया ॥ ५५ ॥

तदानन्तर पोषधोपवासके[1] श्रमणोपासक को पाच अतिचार जानने चाहियें परन्तु उनका समाचरण नहीं करना चाहिये । वह निम्नलिखित हैं । १ शय्या वा संस्तारक प्रतिलेखन न करना यदि करना तो दुष्ट प्रकार से २ शय्या वा संस्तारक प्रमार्जित नहीं करना यदि करना तो दुष्ट प्रकार से ३ पुरीष वा प्रस्रवण स्थान प्रतिलेखन न करना यदि करना तो दुष्ट प्रकार से ४ उच्चार वा प्रस्रवण स्थान प्रमार्जित न

---

१ पोषध–उप–वास–धर्मके समीपबसना ।

करना यदि करना तो दुष्ट प्रकार से ५ पोषधोपवास सम्यक् प्रकार से न पालन करना ॥ ५५ ॥

तयाणन्तरं च णं अहासंविभागस्स समणोवासएणं पञ्च अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा । तं जहा । सचित्त निक्खेवणया, सचित्तपेहणया, कालाइक्कमे, परोवदेसे, मच्छरिया ॥ ५६ ॥

तदानन्तर श्रमणोपासक को यथासंविभागके पांच अतिचार जानने योग्य हैं परन्तु ग्रहण करने योग्य नहीं हैं यथा—१ सचित्त निक्षेपण अर्थात् अदान बुद्धि से निर्दोष वस्तु को सचित्त वस्तु पर रख देना २ सचित्त पिधानता अर्थात् निर्दोष वस्तु को सचित्त पदार्थ (फलादि) से आच्छादन करना ३ कालातिक्रम अर्थात् उचित समय को न देने की बुद्धि से अतिक्रम करना ४ परव्यपदेश अर्थात् पर को आहारादि देने के लिये उपदेश देना और स्वयं लाभ से वंचित रहना ५ कृपणता से देना ॥ ५६ ॥

तयाणन्तरं च णं अपच्छिम मारणान्तिय संलेहणा झूसणाराहणाए पञ्च अइयारा जाणियव्वा, न समा-

---

१ जैसे दूधपर पाणी १ जैसे पाणीपर दूध २ एकवस्तु की स्थिति पूरी होजानेपर साध से विज्ञप्ति करनी ३ अपनी वस्तु को दूसरे की कहकर टालना ४ दूसरों की ईर्षा से दानदेना ।

यरियव्वा। तं जहा। इह लोगासंसप्पओगे, परलो-गासंसप्पओगे, जीविया संसप्पओगे, मरणासंसप्प-ओगे, काम भोगासंसप्पओगे ॥ ५७ ॥

तदानन्तर अपश्चिम मारणान्तिक संलेखना जोषणाराधना के पांच अतिचार जानने योग्य तो हैं परन्तु समाचरण अयोग्य हैं यथा—१ इहलोकाशंसा प्रयोग अर्थात् इहलोक की आशा करना २ परलोकाशंसा प्रयोग अर्थात् देवलोक आदि की आशा करना ३ जीविताशंसा प्रयोग अर्थात् अधिक जीवन की आशा करना ४ मरणाशंसाप्रयोग अर्थात् शीघ्र मृत्यु की आशा करना ५ कामभोगाशंसा प्रयोग अर्थात् (मृत्यु के पश्चात्) कामभोग की आशा करना ॥ ५७ ॥

तएणं से आणन्दे[1] गाहावई समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तिए पञ्चाणुव्वइयं सत्तसिक्खावइयं दुवालसविहं सावयधम्मं पडिवज्जइ, २ त्ता समणं भगवं महावीरं वन्दइ नमंसइ, २ त्ता एवं वयासी।

---

१ वर्गन्त्यो वा प्रा० व्या० अ० ८–पा० १ सू० ३० अनुस्वारस्य वर्गे परे प्रत्यासत्तेस्तस्यैव वर्गस्यान्त्यो वा भवति ॥ पङ्को पंको। सङ्खो संखो। अङ्गणं अंगणं। लङ्घणं लंघणं। कञ्चुओ कंचुओ। लञ्छणं लंछणं। अञ्जियं अंजियं। सञ्झा संझा। कण्टओ कंटओ। उक्कण्ठा उक्कंठा। कण्डं कंडं। सण्ठो संठो। अन्तरं अंतरं। पन्थो पंथा। चन्दो चंदो। बन्धवो बंधवो। कम्पइ कंपइ। वम्फइ वंफइ। कलम्बो कलंबो। आरम्भो आरंभो। वर्ग इति किम्। संसयो। संहरइ। नित्यमिच्छन्त्यन्ये ॥

"नो खलु मे, भन्ते, कप्पइ अज्जप्पभिइं अन्नउत्थिए वा अन्नउत्थिय देवयाणि वा अन्नउत्थियपरिग्गहियाणि वा वन्दित्तए वा नमंसित्तए वा, पुव्विं अणालत्तेणं आलवित्तए वा संलवित्तए वा, तेसिं असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा दाउं वा अणुप्पदाउं वा, नन्नत्थ रायाभिओगेणं गणाभिओगेणं बलाभिओगेणं देवयाभिओगेणं गुरूनिग्गहेणं वित्तिकन्तारेणं। कप्पइ मे समणे निग्गन्थे फासुएणं एसणिज्जेणं असणपाणखाइमसाइमेणं वत्थकम्बलपडिग्गहपायपुञ्छणेणं पीढफलगसिज्जासंथारएणं ओसहभेसज्जेणं य पडिलाभेमाणस्स विहरित्तए"। त्तिकट्टु इमं एयारूवं अभिग्गहं अभिगिण्हइ, २ त्ता पसिणाइं पुच्छइ, २ त्ता अट्ठाइं आदियइ, २ त्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो वन्दइ,

---

१ नो खलु मे भंतेकप्पइ अज्जप्पमिइं अन्नउत्थिए वा अन्नउत्थिय देवयाणि वा अन्नउत्थियपरिग्गहियाणि वा चेइयाइं वंदित्तए वा नमंसित्तए वा इत्यादि प्राचीनप्रतिषु पाठः दृश्यते। किन्तु अधुनाप्रतिषु "अरिहंत चेइयाइं" इत्यपि पाठोऽस्ति सो यह पाठ प्रक्षिप्त सा प्रतीत होता है। अपितु जो मैंने मूल पाठ दिया है वह एशीयाटिक सोसायटी ओफ बंगाल (कलकत्ता) की मुद्रितप्रतिके अनुसार है—लेखक

२ त्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तियाओ दूइपलासाओ चेइयाओ पडिणिक्खमइ, २ त्ता जेणेव वाणियगामे नयरे जेणेव सए गिहे, तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता सिवनन्दं भारियं एवं वयासी। "एवं खलु, देवाणुप्पिए, मए समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तिए धम्मे निसन्ते, से वि य धम्मे मे इच्छिए पडिच्छिए अभिरुइए, तं गच्छ णं तुमं, देवाणुप्पिए, समणं भगवं महावीरं वन्दाहि जाव पज्जुवासाहि, समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तिए पञ्चाणुव्वइयं सत्तसिक्खावइयं दुवालसविहं गिहिधम्मं पडिवज्जाहि" ॥ ५८ ॥

तब गृहपति आनन्द श्रमण भगवान् महावीरजीके पास पांच अणुव्रत और सात शिक्षाव्रत अर्थात् द्वादशविधके श्रावक धर्मको अंगीकार करके और श्रमण भगवान् महावीरजीको वन्दना नमस्कार करके ऐसे बोला। हे भगवन्! अद्यप्रभृतिके (आजके पीछे) पश्चात् राजाभियोग, गणाभियोग, (बरादरी) बलाभियोग, देवताभियोग, गुरूनिग्रह और निर्वाहके भयके अन्यत्र अन्य कुतीर्थिक या अन्ययूथिक देवता या भगवान्का ज्ञान (Reflection) ग्रहन करनेवाले यूथिकको

मुझे वन्दना नमस्कार करना, प्रथम विना बुलाये आलाप या संलाप करना, तथा उनको अशन, पान, खादिमन् वा स्वादिष्ट पदार्थोंका दान अथवा अनुप्रदान नहीं कल्पता है; परन्तु श्रमण वा निर्ग्रन्थियोंको शुद्ध और एषणीय अशन, पान, खादिमन्, स्वादिमन्, वस्त्र, कम्बल, पात्र, प्रतिग्रह, प्रोञ्छन, (रजोहरण) पट्टादि, फलक, शय्या, संस्तारक, औषध और पथ्य देना मुझे कल्पता है। इस बातकी रीत्यानुसार प्रतिज्ञा करके प्रश्न पूछे और आदरसे उत्तर ग्रहण करके श्रमण भगवान् महावीरजीको वन्दना नमस्कार करके भगवान् महावीरजीके पाससे द्युतिपलाश उद्यानसे निकलकर जहां वाणिज्यग्राम नगर था और जहां स्वगृह था वहां पहुंचकर शिवनन्दा भार्याको ऐसे बोला । हे देवानुप्रिये! मैंने श्रमण भगवान् महावीरजीसे धर्मोपदेश श्रवण किया है । वह धर्म मेरी इच्छानुसार, प्रतीष्ट वा मनोहर है, इस कारण, हे देवानुप्रिये! तू श्रमण भगवान् महावीरजीके पास जा और वन्दना नमस्कार करके सेवा भक्ति कर अतः श्रमण भगवान् महावीरजीके पास पांच अणुव्रत और सात शिक्षाव्रत अर्थात् द्वादश प्रकारके गृहस्थ धर्मको अंगीकार कर ॥ ५८ ॥

तएणं सा सिवनन्दा भारिया आणन्देणं समणो वासएणं एवं वुत्ता समाणा हट्ठ तुट्ठा कोडुम्बिय

पुरिसे सद्दावेइ, २ त्ता एवं वयासी । "खिप्पामेव लहुकरण" जाव पज्जुवासइ ॥ ५९ ॥

तब उस शिवनन्दा भार्याने श्रमणोपासक आनन्दसे ऐसा कहे जानेपर प्रसन्न होकर कौटुम्बिक पुरुषोंको बुलाकर ऐसे कहा । शीघ्रही शकट लाओ और समय न खोवो यावत् वह गाड़ीपर चढकर महावीरजीके पास गई और सेवा भक्ति की ॥ ५९ ॥

तएणं समणे भगवं महावीरे सिवनन्दाए तीसे य महइ जाव धम्मं कहेइ ॥ ६० ॥

तब श्रमण भगवान् महावीरजीने शिवनन्दा और (उसकी) उपस्थित सखियों को (यावत्) धर्मोपदेश दिया ॥६०॥

तए णं सा सिवनन्दा समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तिए धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठ जाव गिहिधम्मं पडिवज्जइ, २ त्ता तमेव धम्मियं जाणप्पवरं दुरुहइ, २ त्ता जामेव दिसं पाउब्भूया, तामेव दिसं पडिगया ॥ ६१ ॥

तब शिवनन्दाने धर्म सुनकर निश्चिन्त और प्रसन्न होकर श्रमण भगवान् महावीरजीके पास गृहस्थधर्मको अंगीकार

किया और धार्म्मिक वा श्रेष्ठ रथमें चढकर जिस दिशासे प्रकट हुई थी उसी दिशाको चली गई ॥ ६१ ॥

"भन्ते" त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वन्दइ, नमंसइ, २ त्ता एवं वयासी । "पहू णं, भन्ते, आणन्दे समणोवासए देवाणुप्पियाणं अन्तिए मुण्डे जाव पव्वइत्तए?"

"नो तिणट्ठे समट्ठे, गोयमा । आणन्दे णं समणोवासए बहूइं वासाइं समणोवासग परियागं पाउणिहिइ, २ त्ता जाव सोहम्मे कप्पे अरुणे विमाणे देवत्ताए उववज्जिहिइ । तत्थ णं अत्थेगइयाणं देवाणं चत्तारि पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता । तत्थणं आणन्दस्स वि समणोवासगस्स चत्तारि पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता" ॥ ६२ ॥

भगवान् गौतमजी श्रमण भगवान् महावीरजीको वन्दना नमस्कार करके ऐसे बोले । हे भगवन्! क्या श्रमणोपासक आनन्द देवानुप्रियके पास मुण्डित अर्थात् प्रव्रजित (जैन का शिष्य) होगा? (भगवान् महावीरजीने उत्तर दिया) हे गौतम! वह मुण्डित होनेके समर्थ नहीं है । आनन्द श्रमणोपासक बहुत वर्षतक श्रमणोपासकके धर्मको पालकर (या-

वत्) सौधर्म कल्पमें अरुण विमानमें देवता उत्पन्न होगा। वहां एक वर्गके देवताओंकी चार पल्योपमकी स्थिति कही है वहांपर आनन्द श्रमणोपासक की भी चार पल्योपमकी स्थिति है॥ ६२॥

तएणं समणे भगवं महावीरे अन्नया कयाइ बहिया जाव विहरइ ॥ ६३ ॥

तदानन्तर श्रमण भगवान् महावीरजी अन्यदा समय बाहर विहार कर गये ॥ ६३ ॥

तएणं से आणन्दे समणोवासए जाए अभिगय जीवाजीवे जाव पडिलाभेमाणे विहरइ ॥ ६४ ॥

तब जीवाजीवके भेदका ज्ञाता श्रमणोपासक आनन्द (यावत्) अनुप्रदान करता हुआ रहने लगा॥ ६४॥

तएणं सा सिवनन्दा भारिया समणोवासिया जाया जाव पडिलाभेमाणी विहरइ ॥ ६५ ॥

तब श्रमणोपासिका शिवनन्दा भार्या भी यावत् निर्ग्रन्थियोंकी सेवा करती हुई रहने लगी ॥ ३५॥

तएणं तस्स आणन्दस्स समणोवासगस्स उच्चावएहिं सीलव्वय गुणवेरमण पच्चक्खाण पोसहोववासेहिं अप्पाणं भावेमाणस्स चोद्दस संवच्छराइं

वइक्कन्ताइं। पराणरसमस्स संवच्छरस्स अन्तरा वट्ट-माणस्स अन्नया कयाइ पुव्वरत्तावरत्तकाल समयंसि धम्मजागरियं जागरमाणस्स इमेयारूवे अज्झत्थिए चिन्तिए मणोगए संकप्पे समुप्पज्जित्था। "एवं खलु अहं वाणियगामे नयरे बहूणं राईसर जाव सयस्स वि य णं कुडुम्बस्स जाव आधारे। तं एएणं वक्खे-वेणं अहं नो संचाएमि समणस्स भगवओ महावी-रस्स अन्तियं धम्मपण्णत्तिं उवसम्पज्जित्ताणं विहरि-त्तए। तं सेयं खलु ममंकल्लं जाव जलन्ते विउलं असणं ४ जहा पूरणो जाव जेट्ठपुत्तं कुडुम्बे ठवेत्ता, तं मित्त जाव जेट्ठपुत्तं च आपुच्छित्ता, कोल्लाए सन्नि-वेसे नायकुलंसि पोसहसालं पडिलेहित्ता, समणस्स भगवओ अन्तियं धम्मपण्णत्तिं उवसम्पज्जित्ताणं वि-हरित्तए"। एवं सम्पेहेइ, २ त्ता कल्लं विउलं तहेव जिमियभुत्तुत्तरागए तं मित्त जाव विउलेणं पुप्फ ५ सक्कारेइ सम्माणेइ, २ त्ता तस्सेव मित्त जाव पुरओ जेट्ठपुत्तं सद्दावेइ, २ त्ता एवं वयासी। "एवं खलु, पुत्ता, अहं वाणियगामे बहूणं राईसर जहा चिन्तियं,

जाव विहरित्तए । तं सेयं खलु मम इदाणिं तुमं सयस्स कुडुम्बस्स आलम्बणं ४ ठवेत्ता जाव विहरित्तए" ॥ ६६ ॥

तब उस श्रमणोपासक आनन्दको उच्चावच (बड़े और छोटे) शीलव्रतगुण वेरमणके प्रत्याख्यान वा पोषधोपवासकी भावना करते हुये चतुर्दश वर्ष व्यतीत होगये । पंद्रहवें वर्ष के बीच धर्मकी जागर्या (जागरण) करते हुये अध्यास्थित चिन्तित मनोगत संकल्प मनमें उत्पन्न हुआ । "निश्चय करके मैं बहुत राजा राजकुमार यावत् स्व कुटुम्बका आधार हूं अतः इस व्याक्षेप (रुकावट) के कारण मैं श्रमण भगवान् महावीरजीके पास ग्रहण किये हुये धर्मको पालनेके समर्थ नहीं हूं। इसलिये श्रेष्ठ होगा यदि मैं कल (यावत्) सूर्य्योदयके पश्चात् अन्नपानादि द्वारा 'पूरण' तपस्वीके समान मित्रोंको प्रसन्न करके और ज्येष्ठ पुत्रको कुटुम्बका आधार स्थापित करके, मित्र यावत् ज्येष्ठ पुत्रको पूछकर, कोल्लाक सन्निवेश में स्वजनोंकी पोषधशालाको प्रतिलेखित करके, श्रमण भगवान्के पास ग्रहण किये हुये धर्मका पालन करूं । ऐसा विचार कर द्वितीय दिवस अन्नादिसे उसीप्रकार मित्रोंको सन्तुष्ट करके, पुष्पादिसे उनका सत्कार वा सन्मान किया और एकत्रित मित्रोंके सामने ज्येष्ठ पुत्रको बुलाकर ऐसे बोला ।

हे पुत्र! निश्चय करके मैं बहुतसे राजा, राजकुमारादिका आधार हूं इत्यादि जिसप्रकार उसने सोचा था उसीप्रकार कहा इसलिये श्रेष्ठ हो यदि मैं अब अपने कुटुम्बका तुमको आधार स्थापन करके (यावत्) पोषधशालामें रहूं ॥ ६६ ॥

तएणं जेट्ठपुत्ते आणन्दस्स समणोवासगस्स "तह" त्ति एयमट्ठं विणएणं पडिसुणेइ ॥ ६७ ॥

तब ज्येष्ठ पुत्रने "ऐसा ही हो" ऐसा उच्चारण करके आनन्द श्रमणोपासककी इस बातको विनयसे श्रवण किया ॥६७॥

तए णं से आणन्दे समणोवासए तस्सेव मित्त जाव पुरओ जेट्ठपुत्तं कुडुम्बे ठवेइ, २ त्ता एवं वयासी। "मा णं, देवाणुप्पिया, तुब्भे अज्जप्पभिइं केइ मम बहूसु कज्जेसु जाव आपुच्छउ वा, पडिपुच्छउ वा, ममं अट्ठाए असणं वा ४ उवक्खडेउ उवकरेउ वा ॥ ६८ ॥

तब वह आनन्द श्रमणोपासक स्वमित्रादिके सामने ज्येष्ठ पुत्रको कुटुम्बमें मुख्याश्रय नियुक्त करके ऐसे बोला। हे देवानुप्रियो! अद्यप्रभृतिके पीछे आपने कार्य कारण अथवा निश्चय व्यवहारादिमें कदापि मेरी सम्मति न लेना, और मेरे लिये अन्नपानादिभी न निर्माण करना ॥ ६८ ॥

तए णं से आणन्दे समणोवासए जेट्ठपुत्तं मित्तनाइं आपुच्छइ, २ त्ता सयाओ गिहाओ पडिणिक्खमइ, २ त्ता वाणियगामं नयरं मज्झं मज्झेणं निग्गच्छइ, २ त्ता जेणेव कोल्लाए सन्निवेसे, जेणेव नायकुले, जेणेव पोसहसाला, तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता पोसहसालं पमज्जइ, २ त्ता उच्चार पासवण भूमिं पडिलेहेइ, २ त्ता दब्भसंथारयं संथरइ, दब्भसंथारयं दुरुहइ, २ त्ता पोसहसालाए पोसहिए दब्भसंथारोवगए समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तियं धम्मपण्णत्तिं उवसम्पज्जित्ताणं विहरइ ॥ ६९ ॥

तब वह श्रमणोपासक आनन्द ज्येष्ठपुत्र, मित्र, ज्ञाति पुरुषोंसे पूछकर स्वगृहसे निकला और वाणिजग्राम नगर के मध्यसे जहां कोल्लाक ग्राम था और जहां कुलपुरुष और पोषधशाला थी, वहां जाकर पोषधशाला प्रमार्जित करके, तथा उच्चार प्रश्रवणकी भूमिको प्रतिलेखित करके उसने दर्भ घासका विस्तार किया और अपने आपको वहां स्थित करके पोषधशालामें दर्भ आसपर, पोषध और श्रमण भगवान् महावीरजीके पास गृहीत धर्मको पालता हुआ रहने लगा॥६९॥

तएणं से आणन्दे समणोवासए उवासगपडि-

माओो उवसम्पज्जित्ताणं विहरइ । पढमं उवासगपडिमं अहासुत्तं अहाकप्पं अहामग्गं अहातच्चं सम्मं काएणं फासेइ पालेइ, सोहेइ, तीरेइ, कित्तेइ, आराहेइ ॥ ७० ॥

तब वह आनन्द श्रमणोपासक उपासककी प्रतिमा (प्रतिज्ञा) को पालन करता हुआ विचरने लगा । उपासककी प्रथम प्रतिमा (प्रतिज्ञा)का यथासूत्र, यथाकल्प, यथामार्ग, यथातत्व सम्यक् प्रकारसे कायासे अभ्यास पालन, शोधन, साधन, कीर्तन, और आराधन किया ॥ ७० ॥

तए णं से आणन्दे समणोवासए दोच्चं उवासगपडिमं, एवं तच्चं, चउत्थं, पञ्चमं, छट्ठं, सत्तमं, अट्ठमं, नवमं, दसमं, एक्कारसमं जाव आराहेइ ॥७१॥

तब उस श्रमणोपासकने उपासककी दूसरी पडिमा (प्रतिज्ञा)की (आराधनाकी) फिर तृतीय, चतुर्थ, पंचम, षष्ठम, सप्तम, अष्टम, नवम, दशम, एकादश प्रतिज्ञाओंको सेवन किया ॥ ७१ ॥

तए णं से आणन्दे समणोवासए इमेणं एयारूवेणं उरालेणं विउलेणं पयत्तेणं पग्गहिएणं तवोकम्मेणं सुक्के जाव किसे धमणिसन्तए जाए ॥ ७२ ॥

तब वह आनन्द श्रमणोपासक इस प्रकार उदार, विपुल, पवित्र, प्रगृहीत तपस्या द्वारा शुष्क (सूकगया) होगया यावत् धूमणिके समान सूक गया ॥ ७२ ॥

तए णं तस्स आणन्दस्स समणोवासगस्स अन्न-या कयाइ पुव्वरत्ता जाव धम्मजागरियं जागरमाणस्स अयं अज्झत्थिए ५। "एवं खलु अहं इमेणं जाव धमणिसन्तए जाए। तं अत्थि ता मे उट्ठाणे कम्मे वले वीरिए पुरिसक्कार परक्कमे सद्धाधिइ संवेगे। तं जाव ता मे अत्थि उट्ठाणे सद्धाधिइ संवेगे, जाव य मे धम्मायरिए धम्मोवएसए समणे भगवं महा-वीरे जिणे सुहत्थी विहरइ, ताव ता मे सेयं कल्लं जाव जलन्ते अपच्छिम मारणान्तिय संलेहणा झूस-णा झूसियस्स, भत्तपाण पडियाइक्खियस्स, कालं अणावकङ्खमाणस्स विहरित्तए"। एवं सम्पेहेइ, २ त्ता कल्लं पाउ जाव अपच्छिम मारणान्तिय जाव कालं अणावकङ्खमाणे विहरइ ॥ ७३ ॥

तब अन्यदा समय उस श्रमणोपासक आनन्दके मनमें अर्धरात्रिके समय धर्म जागर्या जागते हुए यह अध्यास्थित संकल्प उत्पन्न हुआ। निश्चयसे अब मैं इस उदार तपस्या

द्वारा (यावत्) घूमणिके समान शुष्क होगया हूं तौभी मेरेमें उपक्रम, बल, वीर्य, पुरुषात्कार, पराक्रम, श्रद्धा, वैराग्य आदि विद्यमान हैं। उद्यम, श्रद्धादि संवेगकी स्थिति भी है और धर्म्माचार्य्य, धर्मोपदेशक श्रमण भगवान् महावीरजी भी जिन सुहस्तिके समान विचरते हैं, इसलिये मुझे उचित है कि कल यावत् सूर्य्योदयके पश्चात् अपश्चिम मारणान्तिक संलेखनाकी जूषणाको जूषित करके अन्न पानका त्याग करके मृत्युकी कांक्षा रहित विचरूं"। ऐसा विचार कर द्वितीय दिवस प्रकाशपने (यावत्) मारणान्तिक संस्तारक करके (यावत्) मृत्युकी इच्छा न करता हुआ वह विचरने लगा ॥ ७३ ॥

तए णं तस्स आणन्दस्स समणोवासगस्स अन्नया कयाइ सुभेणं अज्झवसाणेणं, सुभेणं परिणामेणं, लेसाहिं विसुज्झमाणीहिं तदावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमेणं ओहिनाणे समुप्पन्ने। पुरत्थिमेणं लवणसमुद्दे पञ्च जोयणसयाइं खेत्तं जाणइ पासइ, एवं दक्खिणेणं पच्चत्थिमेणं य। उत्तरेणं जाव चुल्लहिमवन्तं वासधर पव्वयं जाणइ पासइ। उड्ढं जाव सोहम्मं कप्पं जाणइ पासइ। अहे जाव इमीसे रयण-

प्पभाए पुढवीए लोलुयच्चुयं नरयं चउरासीइवास सहस्सट्ठिइयं जाणइ पासइ ॥ ७४ ॥

तब अन्यदा समय आनन्द श्रमणोपासकके शुद्ध अध्यवसान, शुभ परिणाम, लेशमात्र शुद्ध मनके होनेसे तथा तनके रोकनेवाले कर्म्मों के नाश करनेसे उसको अवधि ज्ञान प्राप्त हुआ । पूर्वदिशामें लवण समुद्र और ५०० योजन क्षेत्र (अवधिज्ञानके द्वारा) जाना और देखा, ऐसे ही दक्षिण और पश्चिम दिशामें देखा, उत्तरदिशामें वासधर पर्वत तक छोटे हिमालय (हेमवंत)को जाना और देखा, उच्च दिशामें सौधर्म कल्प जाना और देखा, नीचे रत्नप्रभामें लोलुपाच्युत नामक प्रथम नरकावासको, जिसमें ८४००० वर्षकी स्थिति है, जाना और देखा ॥ ७४ ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे समोसरिए । परिसा निग्गया जाव पडिगया ॥ ७५ ॥

उस काल, उस समय श्रमण भगवान् महावीरजी पधारे । पुरुष (दर्शनार्थ) गये यावत् धर्मोपदेश सुनकर लौट गये ॥७५॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अन्तेवासी इन्दभूई नामं अणगारे

गोयमगोत्ते णं सत्तुस्सेहे, सम चउरंससंठाण संठिए, वज्जरिसहनाराय संघयणे, कणगपुलगनिघसपम्ह-गोरे, उग्गतवे, दित्ततवे, तत्ततवे, घोरतवे, महा-तवे, उराले, घोरगुणे, घोरतवस्सी, घोरवम्भचेर-वासी, उच्छूढसरीरे, संखित्त विउल तेउलेसे, छट्ठं छट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ ॥ ७६ ॥

उस काल, उस समय श्रमण भगवान् महावीरजीके ज्येष्ठ आर अन्तेवासि गौतम गोत्रीय मुनि इन्द्रभूतिजी जो सात हाथ लम्बे, चारों ओर सम संस्थान (आकार) संस्थित, बज्र, वृषभ नाराच सम देहधारी, निकष (कसौटी) पर घिसे हुये स्वर्ण समान श्वेतवर्णीय, उग्र, दीप्त, तप्त, घोर, और महान् तपके करनेहारे, उदार, अत्यन्तगुणवान्, महान् तपस्वी और ब्रह्मचारी, उत्क्षुब्धशरीरी थे और जिन्होंने तेजुलेशाको वशमें किया हुआ था, छटे छटे (बेले २) अन्न खानेसे तथा तपकर्म्म, संयम, तपसे अपना कल्याण करते हुये विचरते थे ॥ ७६ ॥

तएणं से भगवं गोयमे छट्ठक्खमण पारणगंसि पढमाए पोरिसीए सज्झायं करेइ, बिइयाए पोरिसीए झाणं झियाइ, तइयाए पोरिसीए अतुरियं अचवलं

असम्भन्ते मुहपत्तिं पडिलेहेइ, २ त्ता भायणं वत्थाइं पडिलेहेइ, २ त्ता भायणवत्थाइं पमज्जइ, २ त्ता भायणाइं उग्गाहेइ, २ त्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे, तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता समणं भगवं महावीरं वन्दइ नमंसइ, २ त्ता एवं वयासी। "इच्छामि णं, भन्ते, तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए छट्ठक्खमणस्स पारणगंसि वाणियगामे नयरे उच्च नीय मज्झिमाइं कुलाइं घरसमुद्दाणस्स भिक्खायरियाए अडित्तए। अहासुहं, देवाणुप्पिया, मा पडिबन्धं करेह" ॥ ७७ ॥

तत्र भगवान् गौतमजीने षष्ठक्षमणके पारणाके समय (बेलाव्रतकी समाप्ति पर) प्रथम प्रहरमें स्वाध्याय किया, द्वितीय प्रहरमें ध्यान किया, तृतीय प्रहरमें अत्वरित, अचपल और असम्भ्रान्त भगवान् गौतमजी मुखपत्तिको प्रतिलेखित करके और भाजन (पात्र) वस्त्रादिको शुद्ध तथा प्रमार्जित करके, भाजनादिको ग्रहण करके जहां श्रमण भगवान् महावीरजी थे वहां जाकर श्रमण भगवान् महावीरजीको वन्दना नमस्कार करके ऐसे बोले। हे भगवन्! यदि आप आज्ञा दें तो मेरी इच्छा है कि षष्ठ क्षमणके पारणाके लिये ऊंच, सामान्य और मध्यम कुलके गृहोंके समुदायसे भिक्षादि

ग्रहण करूं (भगवान्ने उत्तर दिया) हे देवानुप्रिय! जिस प्रकार तुम्हें सुख हो (उस प्रकार करो) विलम्ब मत करो ॥७७॥

तएणं भगवं गोयमे समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुण्णाए समाणे समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तियाओ दूइपलासाओ चेइयाओ पडिणिक्खमइ, २ त्ता अतुरियमचवलमसम्भन्ते जुगन्तर परिलोयणाए दिट्ठीए पुरओ इरियं सोहेमाणे, जेणेव वाणियगामे नयरे, तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता वाणियगामे नयरे उच्चनीयमज्झिमाइं कुलाइं घर समुदाणस्स भिक्खायरियाए अडइ ॥ ७८ ॥

तब भगवान् गौतमजीने श्रमण भगवान् महावीरजीसे आज्ञा पाकर श्रमण भगवान् महावीरजीके पाससे द्युतिपलाश उद्यानसे निकलकर अत्वरित, अचपल और असम्भ्रान्त दृष्टिसे एक युगतक[1] परिलोचन करते हुये जहां वाणिजग्राम नगर था वहां जाकर वाणिजग्राम नगरमें ऊंच सामान्य और मध्यम कुलके गृहोंके समुदायकी भिक्षा ग्रहण की ॥ ७८ ॥

तए णं से भगवं गोयमे वाणियगामे नयरे, जहा पण्णत्तीए तहा, जाव भिक्खायरियाए अडमाणे

---

१ साढेतीन हाथ प्रमाण देखते हुए।

अहापज्जत्तं भत्तपाणं सम्मं पडिग्गाहेइ, २ त्ता वाणि-यगामाओ पडिणिग्गच्छइ, २ त्ता कोल्लायस्स सन्नि-वेसस्स अदूरसामन्तेणं वईवयमाणे, बहुजण सद्दं निसामेइ । बहुजणो अन्नमन्नस्स एवमाइक्खइ ४ । "एवं खलु, देवाणुप्पिया, समणस्स भगवओ अन्ते-वासी, आणन्दे नामं समणोवासए पोसहसालाए अपच्छिम जाव अणवकङ्खमाणे विहरइ" ॥ ७९ ॥

तब भगवान् गौतमजी वाणिजग्राम नगरमें पूर्वोक्त रीत्या-नुसार भिक्षादि ग्रहण करते हुए यथापर्याप्त (जितनी इच्छा थी) अन्नपानका सम्यक् प्रकारसे संग्रह करके वाणिजग्राम नगरसे निकले और उन्होंने कोल्लाग सन्निवेशके निकट वार्त्ता-लाप करते हुए बहुत जनोंके शब्दोंको सुना । बहुतसे मनुष्य आपसमें इसतरह वार्त्तालाप करते थे। हे देवानुप्रियो! श्रमण भगवान्जीका अन्तेवासी आनन्द श्रमणोपासक पोषधशालामें अपश्चिम मारणान्तिक संलेखना करके, यावत् मृत्युकी इच्छासे रहित विचरता है ॥ ७९ ॥

तए णं तस्स गोयमस्स बहुजणस्स अन्तिए एयं सोच्चा निसम्म अयमेयारूवे अज्झत्थिए ४ । "तं गच्छामि णं, आणन्दं समणोवासयं पासामि" ।

एवं सम्पेहेइ, २ त्ता जेणेव कोल्लाए सन्निवेसे, जेणेव आणन्दे समणोवासए, जेणेव पोसहसाला, तेणेव उवागच्छइ ॥ ८० ॥

तब गौतमजीके मनमें बहुतजनोंके पास ऐसा श्रवण करके, इस रूपमें अध्यास्थित संकल्प उत्पन्न हुआ ॥ "इस कारण मैं जाता हूं और आनन्द श्रमणोपासकको देखता हूं।" ऐसा विचार करके जहां कोल्लाकसन्निवेश, आनन्द श्रमणोपासक और पोषधशाला थी वहां गये ॥ ८० ॥

तएणं से आणन्दे समणोवासए भगवं गोयमं एज्जमाणं पासइ, २ त्ता हट्ठ जाव हियए भगवं गोयमं वन्दइ, नमंसइ, २ त्ता एवं वयासी । "एवं खलु, भन्ते, अहं इमेणं उरालेणं जाव धमणिसन्तए जाए, नो संचाएमि देवाणुप्पियस्स अन्तियं पाउब्भवित्ताणं तिक्खुत्तो मुद्धाणेणं पाए अभिवन्दित्तए । तुब्भे णं, भन्ते, इच्छाकारेणं अणभिओएणं इओ चेव एह, जा णं देवाणुप्पियाणं तिक्खुत्तो मुद्धाणेणं पाएसु वन्दामि नमंसामि" ॥ ८१ ॥

तब आनन्द श्रमणोपासक भगवान् गौतमजीको आते हुये देखकर और हृदयमें प्रसन्न होकर (यावत्) भगवान्

गौतमजीको वंदना नमस्कार करके ऐसे बोला। हे भगवन्! मैं इस उदार तपादिसे (यावत्) धमणिके (या शुष्कट्टतिके) समान होगया हूं और देवानुप्रियके पास आकर पाओंपर मस्तकसे तीनवार वन्दना करनेके समर्थ नहीं हूं इसलिये, हे भगवन्! आप अपनी इच्छानुसार अभियोगरहित होकर यहां पधारें ताकि देवानुप्रियके पादुका पर तीनवार मस्तकसे वन्दना नमस्कार करूं ॥ ८१ ॥

तएणं से भगवं गोयमे, जेणेव आणन्दे समणोवासए, तेणेव उवागच्छइ ॥ ८२ ॥

तब भगवान् गौतमजी जहां आनन्द श्रमणोपासक था, वहां गये ॥ ८२ ॥

तए णं से आणन्दे समणोवासए भगवओ गोयमस्स तिक्खुत्तो मुद्धाणेणं पाएसु वन्दइ, नमंसइ, २ त्ता एवं वयासी ॥ "अत्थि णं, भन्ते, गिहिणो गिहिमज्झा वसन्तस्स ओहिनाणे णं समुप्पज्जइ?"। "हन्ता, अत्थि"।

"जइ णं, भन्ते, गिहिणो जाव समुप्पज्जइ, एवं खलु, भन्ते, मम वि गिहिणो गिहिमज्झा वसन्तस्स ओहिनाणे समुप्पन्ने। पुरत्थिमेणं लवणसमुद्दे पञ्च

जोयण सयाइं जाव लोलुयच्चुयं नरयं जानामि पासामि" ॥ ८३ ॥

तब आनन्द श्रमणोपासक भगवान् गौतमजीके पाओं पर तीन वार मस्तकसे वन्दना नमस्कार करके ऐसे बोला । हे भगवन्! क्या गृहमें रहतेहुये गृहस्थीको अवधिज्ञान उत्पन्न होजाता है? । (गौतमस्वामी बोले) "(अवधि ज्ञान उत्पन्न) हो जाता है ॥ (आनन्दने कहा) हे भगवन् ! यदि गृहस्थीको ज्ञानकी प्राप्ति हो जाती है तो निश्चयसे, हे भगवन्! मुझे गृहमें वास करतेहुये गृहस्थीकोभी अवधिज्ञान प्राप्त हुआ है (जिसके प्रभावसे मैं) पूर्वदिशामें लवणसमुद्र और ५०० योजनक्षेत्र (यावत्) लोलुपाच्युत नरकको जानता हूं और देखता हूं ॥ ८३ ॥

तएणं से भगवं गोयमे आणन्दं समणोवासयं एवं वयासी । "अत्थि णं, आणन्दा, गिहिणो जाव समुप्पज्जइ । नो चेव णं एमहालए । तं णं तुमं, आणन्दा, एयस्स ठाणस्स आलोएहि जाव तवोकम्मं पडिवज्जाहि" ॥ ८४ ॥

तब भगवान् गौतमजी आनन्द श्रमणोपासकको ऐसे बोले। हे आनन्द ! गृहस्थीको ज्ञानकी प्राप्ति तो हो जाती है परन्तु

इतनी ऊंच नहीं । इसलिये, हे आनन्द! तूं इस स्थानकी आलोचना कर यावत् तपकर्म्मका दण्ड ग्रहण कर ॥ ८४ ॥

तएणं से आणन्दे समणोवासए भगवं गोयमं एवं वयासी । "अत्थि णं, भन्ते, जिणवयणे सन्ताणं तच्चाणं तहियाणं सब्भूयाणं भावाणं आलोइज्जइ जाव पडिवज्जिज्जइ?" ।

"नो तिणट्ठे समट्ठे" ।

"जइ णं, भन्ते, जिणवयणे सन्ताणं जाव भावाणं नो आलोइज्जइ जाव तवोकम्मं नो पडिवज्जिज्जइ । तं णं, भन्ते, तुब्भे चेव एयस्स ठाणस्स आलोएह जाव पडिवज्जह" ॥ ८५ ॥

तब वह आनन्द श्रमणोपासक भगवान् गौतमजीको ऐसे बोला । हे भगवन्! "सत्य, यथार्थ, और सद्भूत भावकी आलोचना करना यावत् दण्ड ग्रहण करना क्या जिनधर्ममें (प्रतिष्ठित) है?"

(गौतमस्वामीजीने उत्तर दिया) "नहीं यह जिनधर्ममें (मान्य) नहीं है?"

(आनन्द बोला) हे भगवन्! यदि सत्य (यावत्) भावकी आलोचना करना और तपकर्मका दण्ड ग्रहण करना जिन-

वचनोंमें (मान्य) नहीं है तो, हे भगवन्! आपही इस स्थानकी आलोचना करें (यावत्) दण्ड लेवें ॥ ८५ ॥

तएणं से भगवं गोयमे आणन्देणं समणोवासएणं एवं वुत्ते समाणे, सङ्किए, कङ्खिए, विइगिच्छासमावन्ने, आणन्दस्स अन्तियाओ पडिणिक्खमइ, २ त्ता जेणेव दूइपलासे चेइये, जेणेव समणे भगवं महावीरे, तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अदूरसामन्ते गमणागमणाए पडिक्कमइ, २ त्ता एसणमणेसणं आलोएइ, २ त्ता भत्तपाणं पडिदंसेइ, २ त्ता समणं भगवं वन्दइ नमंसइ, २ त्ता एवं वयासी। "एवं खलु, भन्ते, अहं तुब्भेहिं अब्भणुणाए। तं चेव सव्वं कहेइ जाव। तएणं अहं सङ्किए ३ आणन्दस्स समणोवासगस्स अन्तियाओ पडिणिक्खमामि, २ त्ता जेणेव इहं तेणेव हव्वमागए। तं णं, भन्ते, किं आणन्देणं समणोवासएणं तस्स ठाणस्स आलोएयव्वं जाव पडिवज्जेयव्वं, उदाहु मए?"।

"गोयमा इ समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं

एवं वयासी। "गोयमा, तुमं चेव णं तस्स ठाणस्स आलोएहि, जाव पडिवज्जाहि, आणन्दं च समणो वासयं एयमट्ठं खामेहि" ॥ ८६ ॥

तब भगवान् गौतमजी आनन्द श्रमणोपासकसे ऐसा कहे जानेपर शंका, कांक्षा, संदेह उत्पन्न होनेपर, आनन्द के पाससे निकलकर, जहां दूतिपलाश उद्यान था और जहां श्रीश्रमण भगवान् महावीरजी विद्यमान थे, वहां गये और श्रमण भगवान् महावीरजीके निकट गमनागमनका प्रतिक्रमण करके, इच्छित और अनिच्छित वस्तुकी आलोचना करके, अन्नपान दिखाकर श्रमण भगवान् महावीरजीको वन्दना नमस्कार करके ऐसे बोले। हे भगवन्! मैं आपकी आज्ञासे भिक्षा ग्रहण करने गया था इत्यादि (आगे सर्व वृत्तान्त कह सुनाया) तब वहां मैं शंकित होकर आनन्द श्रमणोपासकसे लौटकर शीघ्र यहां आया हूं सो हे भगवन्! क्या आनन्द श्रमणोपासकको इस स्थानकी आलोचना करना यावत् दण्ड लेना चाहिये या मुझे? श्रमण भगवान् महावीरजी (उत्तरमें) भगवान् गौतमको ऐसे बोले। हे गौतम! तूही इस स्थानकी आलोचना कर यावत् दण्ड ग्रहण कर और आनन्द श्रमणोपासकसे इस बातकी क्षमा मांग ॥ ८६ ॥

तएणं से भगवं गोयमे समणस्स भगवओ

महावीरस्स "तह" त्ति एयमट्ठं विणएणं पडिसुणेइ, २ त्ता तस्स ठाणस्स आलोएइ जाव पडिवज्जइ, आणन्दं च समणोवासयं एयमट्ठं खामेइ ॥ ८७ ॥

तब भगवान् गौतमजीने श्रमण भगवान् महावीरजीकी ("सत्य है" ऐसा वचन उच्चारण करके) यह वात विनयसे सुनी और उस स्थानकी आलोचनाकी यावत् दण्ड ग्रहण किया अतः आनन्द श्रमणोपासकसे जाकर इस बातकी क्षमा मांगी ॥ ८७ ॥

तएणं समणे भगवं महावीरे अन्नया कयाइ बहिया जणवय विहारं विहरइ ॥ ८८ ॥

तब श्रमणभगवान् महावीरजी अन्यदा समय बाहिर किसी अन्य देशको विहार कर गये ॥ ८८ ॥

तएणं से आणन्दे समणोवासए बहूहिं सीलव्वएहिं जाव अप्पाणं भावेत्ता, वीसं वासाइं समणोवासग परियागं पाउणित्ता, एक्कारस य उवासगपडिमाओ सम्मं काएणं फासित्ता, मासियाए संलेहणाए अत्ताणं झूसित्ता, सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदेत्ता, आलोइयपडिक्कन्ते, समाहिपत्ते, कालमासे कालं किच्चा, सोहम्मे कप्पे सोहम्मवडिंसगस्स महाविमाणस्स

उत्तरपुरत्थिमेणं अरुणे विमाणे देवत्ताए उववन्ने। तत्थ णं अत्थेगइयाणं देवाणं चत्तारि पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता ।तत्थ णं आणन्दस्स वि देवस्स चत्तारि पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता ॥ ८९ ॥

तब उस आनन्द श्रमणोपासकने बहुत शीलव्रतसे अपना कल्याण किया, बीसवर्षतक श्रमणोपासककी पर्यायको पाला, उपासककी एकादश प्रतिज्ञाओंको सम्यक्‌प्रकारसे कायासे आराधन किया. एक मासतक संलेखनाके कालको आसेवन करके, ६० प्रकारके भक्तोंको छेदन करके फिर आलोचना और प्रतिक्रमण करके, समाधि प्राप्त की और कालके अवसर मृत्युको प्राप्त करके सौधर्म्म कल्पमें सौधर्म्म अवतंसकके महाविमानके उत्तरपूर्वके मध्यकी दिशामें अरुण विमानमें देवता उत्पन्न हुआ । वहां कितनेक देवताओंकी चार पल्योपमकी स्थिति कही है । इसलिये आनन्द देवताकीभी चार पल्योपमकी स्थिति कही है ॥ ८९ ॥

"आणन्दे णं, भन्ते, देवे ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं ३ अणन्तरं चयं चइत्ता, कहिं गच्छिहिइ, कहिं उववज्जिहिइ ?" ।

"गोयमा, महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ" ॥ ९० ॥

(गौतमजीने पूछा) हे भगवन् ! "आनन्द देवता देव-लोकसे आयु क्षय करके (?) कहां जावेगा और कहा उत्पन्न होगा ?" ।

(भगवान्ने उत्तर दिया) हे गौतम ! महाविदेह क्षेत्रमें सिद्ध होगा ॥ ९० ॥

॥ निक्खेवो ॥

(निक्षेपः—"एवं खलु जम्बू समणेणं जाव उवासगदसाणं पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पणत्ते)

सत्तमस्स अंगस्स उवासगदसाणं पढमं अज्झयणं समत्तं ॥

सप्तमांग उपासकदशा का प्रथम अध्ययन समाप्त हुआ ॥

बीयं अज्झयणं ।

(द्वितीय अध्ययन)

जइ णं, भन्ते, समणेणं भगवया महावीरेणं जाव सम्पत्तेणं सत्तमस्स अंगस्स उवासगदसाणं पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पणत्ते, दोच्चस्स णं, भन्ते, अज्झयणस्स के अट्ठे पणत्ते ? ॥ ९१ ॥

(जम्बू स्वामीजी बोले) हे भगवन् ! यदि श्रमण भगवान्

महावीरजीने जो मोक्षको प्राप्त होगये हैं सप्तम अङ्ग उपासकदशाके प्रथम अध्ययनके यह अर्थ कहे हैं, तो, हे भगवन्! द्वितीय अध्ययनके क्या अर्थ कहे हैं? ॥ ९१ ॥

एवं खलु, जम्बू, तेणं कालेणं तेणं समएणं चम्पा नामं नयरी होत्था। पुण्णभद्दे चेइए। जियसत्तु राया। कामदेवे गाहावइ। भद्दा भारिया। छ हिरण्ण कोडीओ निहाण पउत्ताओ, छ वड्ढि पउत्ताओ, छ पवित्थर पउत्ताओ। छ वया दसगोसाहस्सिएणं वएणं। समोसरणं। जहा आणन्दो तहा निग्गओ। तहेव सावयधम्मं पडिवज्जइ। सा चेव वत्तव्वया जाव जेट्ठपुत्तं मित्तनाइं आपुच्छित्ता, जेणेव पोसहसाला, तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता जहा आणन्दो जाव समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तियं धम्मपण्णत्तिं उवसम्पज्जित्ताणं विहरइ ॥ ९२ ॥

(सुधर्म्मा स्वामीजीने उत्तर दिया) हे जम्बू! उसकाल, उससमय चम्पा नामा एक नगरी थी। उसमें पूर्णभद्र उद्यान था। जितशत्रु राजा राज्य करता था। उस नगरीमें कामदेव गाथापति रहता था, जिसकी भद्रा भार्या थी। उसके पास ६ करोड़ स्वर्णमुद्रा निधानप्रयुक्त, ६ करोड़

वृद्धिप्रयुक्त और ६ करोड़ प्रविस्तरप्रयुक्त थीं। दशहज़ार गौका एक वर्ग, ऐसे ६ वर्ग थे। भगवान् महावीरस्वामीके समवसरणमें आनन्दके समान वह कामदेव भी गया उसी प्रकार ही श्रावकधर्म्मको अंगीकार किया, तथा उसी प्रकारही ज्येष्ठ पुत्र, मित्र और सम्बन्धियोंको पूछकर जहां पोषधशाला थी, वहां जाकर आनन्दके समान श्रवण भगवान् महावीर जीके पास ग्रहण किये हुए धर्म्मको पालता हुआ रहने लगा॥९२॥

तएणं तस्स कामदेवस्स समणोवासगस्स पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि एगे देवे मायी मिच्छदिट्ठी अन्तियं पाउब्भूए॥ ९३ ॥

तब उस कामदेव श्रमणोपासकके पास अर्ध रात्रिके समय कपटी और मिथ्यादृष्टि एक देवता प्रगट हुआ॥ ९३ ॥

तए णं से देवे एगं महं पिसायरूवं विउवइ। तस्स णं देवस्स पिसायरूवस्स इमे एयारूवे वणावासे पणत्ते। सीसं से गोकिलञ्जसंठाणसंठियं, सालिभसेल्लसरिसा से केसा कविलतेएणं दिप्पमाणा, महल्लउट्टियाकभल्लसंठाण संठियं निडालं, मुगुंस पुंछं व तस्स भुमगाओ फुग्गफुग्गाओ विगयवीभच्छदंसणाओ, सीसघडिविणिग्गयाइं अच्छीणि वि-

गयबीभच्छदंसणाइं, कण्णा जह सुप्पकत्तरं चेव विग-यबीभच्छदंसणिज्जा, उरब्भपुडसन्निभा से नासा, झु-सिराजमलचुल्लीसंठाण संठिया दो वि तस्स नासा पुडया, घोडयपुंछं व तस्स मंसूइं कविलकविलाइं विगयबीभच्छदंसणाइं, उट्ठा उट्ठस्स चेव लम्बा, फालसरिसा से दन्ता, जिब्भा जह सुप्पकत्तरं चेव विगयबीभच्छदंसणिज्जा, हलकुडाल संठिया से हणु-या, गल्लकडिल्लंच तस्स खड्डं फुट्टं कविलं फरुसं महल्लं, मुइङ्गाकारोवमे से खन्धे, पुरवरकवाडोवमे से वच्छे, कोट्ठिया संठाण संठिया दो वि तस्स बाहा, निसापाहाण संठाण संठिया दो वि तस्स अग्गहत्था, निसालोढ संठाणसंठियाओ हत्थेसु अंगुलीओ, सिप्पि पुडगसंठिया से नक्खा, ण्हवियपसेवओ व उरंसि लम्बन्ति दो वि तस्स थणया, पोट्टं अयकोट्ठओ व वट्टं, पाणकलन्दसरिसा से नाही, सिक्कगसंठाण संठिए से नेत्ते, किणपुड संठाण संठिया दो वि तस्स वसणा, जमलकोट्ठियासंठाणसंठिया दो वि तस्स ऊरू, अज्जुणगुट्ठं व तस्स जाणूइ कुडिल कुडिलाइं

विगय बीभच्छ दंसणाइं, जङ्घाओ करकडीओ लोमेहिं उवचियाओ, अहरी संठाणसंठिया दो वि तस्स पाया, अहरीलोढ संठाण संठियाओ पाएसु अङ्गुलीओ, सिप्पि पुड संठिया से नक्खा ॥ १४ ॥

तब उस देवताने एक महान् पिशाचरूपको धारण किया॥ उस पिशाचरूप देवताके उस रूपका इसप्रकार वर्णन है । उसका शीर्ष (सिर) गोकिलञ्ज (गायके चरनेका महान् भाजन) संस्थान संस्थित, केश शालि (धान) तुषाके सदृश और कपिल तेजसे दीप्यमान, ललाट महान् उष्ट्रिकाकपाल संस्थान संस्थित, भौं छिपकलीकी पुच्छके समान और रोम विक्षिप्त, विकृत तथा बीभत्स, (दर्शनायोग्य) थे उसके नेत्र वर्तुलाकारशिरके सदृश् विकृत और बीभत्स, कर्ण शूर्पकर्त्तरके (छाज) समान विकृत और बीभत्स, नासिका उरभ्रपुट (मेष, मेंढा) सदृश् और नासापुट चूल्हेके दोनों छिद्रोंके समान संस्थानसे संस्थित थे, उसकी दीर्घ, विकृत और बीभत्स श्मश्रु (दाढी) घोटक (घोड़ा) की पुच्छके समान, ओष्ठ उष्ट्र (ऊंठ) के समान लम्बे, दांत फाल (लोहमय कुशा) के सदृश्, विकृत और बीभत्स जिह्वा शूर्पकर्त्तर समान, और उसके हनु (जबड़े) हलकुद्दालके सदृश् थे, उसकी कटाहसम कपोल गर्ताकार (मध्यभाग जिसका

निम्न है) विदीर्ण, दीर्घ, परुष (कठोर) और महान् थी। उसके स्कन्ध मृदङ्गाकारके सदृश, वक्ष (छाती) श्रेष्ठ नगरके कपाट (दरवाज़ा) के समान, दोनों भुजा कुशूलिका (कोठी) संस्थान संस्थित, दोनों अग्रहस्त शिलापाषाण (मुद्गादि दलन शिला) संस्थान संस्थित, हस्ताङ्गुली शिलापुत्रक संस्थान संस्थित और नख शुक्तिपुट संस्थित थे, उसके दोनों स्तन नापितप्रसेवक (नाईकी गुच्छी) समान छातीपर लटकते थे, उसका जठर लोहकुशूलके सदृश वृत्त (गोल) था, उसकी नाभि पानकलन्द (चवचा) समान और नेत्र शिक्यक (छिका) संस्थान संस्थित थे, उसके दोनों वसन किण्वपुट संस्थान संस्थित, दोनों जांघ यमलकुशूलिक संस्थान संस्थित और विकृत तथा बीभत्स जानु अर्जुनगुच्छ (अर्जुन वृक्षके पत्तोंके गुच्छे) सदृश थे अपरंच उसकी जंघा निर्मांस, प्रचुररोमयुक्त और उपचित थीं, उसके दोनों पाद पेषणशिला संस्थान संस्थित, अधमाङ्ग अङ्गुली शिलापुत्रक संस्थान संस्थित और नख शुक्तिपुट संस्थित थे ॥ ९४ ॥

लडहमडह जाणुए विगयभागभुग्गभुमए अवदालियवयणविवरनिल्लालियग्ग जीहे सरडकयमालियाए उन्दुरमालापरिणद्धसुकयचिन्धे, नउल कयकण्णपूरे, सप्पकयवेगच्छे, अप्फोडन्ते, अभिगज्जन्ते,

भीममुक्कट्टहासे, नाणाविह पञ्चवणेहिं लोमेहिं उव-
चिए एगं महं नीलुप्पलगवलगुलिय अयसिकुसुम-
प्पगासं असिं खुरधारं गहाय, जेणेव पोसहसाला,
जेणेव कामदेवे समणोवासए, तेणेव उवागच्छइ,
२ त्ता आसुरत्ते रुट्ठे कुविए चण्डिक्किए मिसिमिसीय-
माणे कामदेवं समणोवासयं एवं वयासी। "हं भो
कामदेवा समणोवासया, अप्पत्थियपत्थिया, दुरन्त-
पन्तलक्खणा, हीण पुण्ण चाउद्दसिया, हिरिसिरि-
धिइकित्ति परिवज्जिया, धम्मकामया पुण्णकामया
सग्गकामया मोक्खकामया धम्मकंखिया पुण्णकंखिया
सग्गकंखिया मोक्खकंखिया धम्मपिवासिया पुण्ण-
पिवासिया सग्ग पिवासिया मोक्खपिवासिया, नो
खलु कप्पइ तव, देवाणुप्पिया, जं सीलाइं वयाइं
वेरमणाइं पच्चक्खाणाइं पोसहोववासाइं चालित्तए
वा खोभित्तए वा खण्डित्तए वा भञ्जित्तए वा उज्झि-
त्तए वा परिच्चइत्तए वा, तं जइ णं तुमं अज्ज सी-
लाइं जाव पोसहोववासाइं न छड्डेसि न भञ्जेसि,
तो ते अहं अज्ज इमेणं नीलुप्पल जाव असिणा

खण्डाखण्डिं करेमि, जहा णं तुमं, देवाणुप्पिया, अट्ट दुहट्टवसट्टे अकाले चेव जीवियाओ ववरोविजसि" ॥ १५ ॥

उसके दोनों जानु लटकते थे और कम्पन करते थे, उसके भौं विकृत और नमित थे, अग्रजिह्वा अवदारित (widely opened)तथा मुखसे निःसारित थी, कृकलास (किरला) कृत मालिका और मूषिक माला चिन्हार्थ शरीरपर सुशोभित थीं, कर्ण नकुलकर्णौजकसे पूर्ण थे, सर्पकृत वैकक्ष (हार) पहना हुआ था, इसप्रकारसे वह देवता करास्फोट करता हुआ अर्थात् हाथ मारता हुआ, घनध्वनि समान गर्जता हुआ, विशेष प्रकारसे हास करता हुआ, नानाविध पांच प्रकारके रोमसे उपचित होकर, एक महान् क्षुरधारा नीलोत्पल, गवल, गुलिका, अतसीकुसुमप्रकाशयुक्त तलवारको ग्रहन करके जहां पोषधशाला थी जहां कामदेव श्रमणोपासक था वहां गया; वहां जाकर (वह देवता) कोप दिखाता हुआ कामदेव श्रमणोपासकको ऐसे बोला ॥ हे अप्रार्थित प्रार्थिक! दुष्ट लाक्षणिक! हीनपुण्यचतुर्दशीक! ह्री, श्री, धृति, कीर्तिपरिवर्जित! धर्म्म, पुण्य, स्वर्ग, मोक्षकामक! धर्म्म, पुण्य, स्वर्ग, मोक्षइच्छुक! धर्म्म पुण्य स्वर्ग मोक्ष पिपासु कामदेव श्रमणोपासक! तुझे शीलव्रतके विरुद्ध प्रत्या-

ख्यान, पोषधोपवास, त्यागना, क्षोभित करना, खण्डित करना, भंग करना, उद्धृत करना वा परित्याग करना नहीं कल्पताहै परन्तु यदि तूं आज शील (यावत्) पोषधोपवास न त्यागेगा और भंग न करेगा तौ मैं आज इस नीलोत्पल (यावत्) तलवारसे तेरे खण्ड खण्ड करूंगा, जिस कारण तू, हे देवानुप्रिय ! दुःखोंके वश होकर असमय जीवन त्याग देगा ॥ ६५ ॥

तएणं से कामदेवे समणोवासए तेणं देवेणं पिसायरूवेणं एवं वुत्ते समाणे, अभीए अतत्थे अणुव्विग्गे अक्खुभिए अचलिए असम्भन्ते तुसिणीए धम्मज्झाणोवगए विहरइ ॥ ९६ ॥

तब उस पिशाचरूप देवतासे ऐसा कहा जानेपर वह अभीत, अत्रस्त, अनुद्विग्न, अव्याकुल, अचलित, असम्भ्रान्त, तूष्णीक कामदेव श्रमणोपासक धर्म ध्यानमें स्थित रहा ॥९६॥

तएणं से देवे पिसायरूवे कामदेवं समणोवासयं अभीयं जाव धम्मज्झाणोवगयं विहरमाणं पासइ, २ त्ता दोच्चं पि तच्चं पि कामदेवं एवं वयासी । "हं भो कामदेवा समणोवासया अपत्थियपत्थिया, जइ णं तुमं अज्ज जाव ववरोविज्जसि" ॥ ९७ ॥

तब वह पिशाचरूप देवता कामदेव श्रमणोपासकको अभीत यावत् धर्मध्यानमें स्थित देखकर कामदेवको दो तीनवार ऐसे बोला ॥ हे श्रमणोपासक कामदेव ! कुपथ इच्छुक ! अगर तू आज (यावत्) शीलादिको न भंग करेगा तो तू आज मृत्युको प्राप्त होगा ॥ ९७ ॥

तएणं से कामदेवे समणोवासए तेणं देवेणं दोच्चं पि तच्चं पि एवं वुत्ते समाणे, अभीए जाव धम्मज्झाणोवगए विहरइ ॥ ९८ ॥

तब वह कामदेव श्रमणोपासक उस देवतासे दो तीन वार ऐसा कहा जानेपर अभीत (यावत्) धर्मध्यानमें स्थित रहा ॥ ९८ ॥

तएणं से देवे पिसायरूवे कामदेवं समणोवासयं अभीयं जाव विहरमाणं पासइ, २ त्ता आसुरत्ते ५ तिवलियं भिउडिं निडाले साहट्टु, कामदेवं समणोवासयं नीलुप्पल जाव असिणा खण्डाखण्डिं करेइ ॥ ९९ ॥

तब उस पिशाचरूप देवताने कामदेव श्रमणोपासकको अभीत (यावत्) विचरता हुआ देखकर, क्रोधमें मस्तकपर त्रिवलीक भ्रूकुटिको धारण करके, कामदेव श्रमणोपासकको नीलोत्पल तलवारसे भाग भाग किया ॥ ९९ ॥

तएणं से कामदेवे समणोवासए तं उज्जलं जाव दुरहियासं वेयणं सम्मं सहइ जाव अहियासेइ ॥१००॥

तब उस कामदेव श्रमणोपासकने उस अग्निमय और दुःसह्य वेदनाको पूर्ण शांतिके साथ भोगा यावत् सहन किया ॥१००॥

तएणं से देवे पिसायरूवे कामदेवं समणोवासयं अभीयं जाव विहरमाणं पासइ, २ त्ता जाहे नो संचाएइ कामदेवं समणोवासयं निग्गन्थाओ पावयणाओ चालित्तए वा खोभित्तए वा विपरिणामित्तए वा, ताहे सन्ते तन्ते परितन्ते सणियं सणियं पच्चोसक्कइ, २ त्ता पोसहसालाओ पडिणिक्खमइ, २ त्ता दिव्वं पिसायरूवं विप्पजहइ, २ त्ता एगं महं दिव्वं हत्थिरूवं विउव्वइ, सत्तङ्ग पइट्ठियं सम्मं संठियं सुजायं, पुरओ उदग्गं पिट्ठओ वाराहं अयाकुच्छिं अलम्बकुच्छिं पलम्बलम्बोदराधरकरं अब्भुग्गय मउल मल्लिया विमल धवलदन्तं कञ्चणकोसीपविट्ठदन्तं आणामिय चावललिय संविल्लियग्गसोण्डं कुम्मपडिपुण्ण चलणं वीसइ नक्खं अल्लीणपमाणजुत्तपुच्छं ॥ १०१ ॥

तब उस पिशाचरूप देवताने कामदेव श्रमणोपासकको

भयरहित (यावत्) विचरते हुये देखकर विचार किया "मैं कामदेव श्रमणोपासकको निर्ग्रन्थियोंके बचनोंसे चलायमान, क्षुभित और विपरिणामित करनेके समर्थ नहीं हूं" । अतः उस पिशाचरूप देवताने निराश और श्रान्त होकर शनैः शनैः पीछे हटकर पोशधशालासे निकलकर दिव्य पिशाचरूपको त्यागकर एक महान् दिव्य हस्तीके रूपको धारण किया । वह रूप प्रतिष्ठित सात ७ अङ्गोंसे युक्त, सम्यक् प्रकारसे संस्थित अर्थात् मांसोपचयसे निर्मित, सकल अंगोपाङ्गसे सुजात था । उसका पूर्व भाग उदग्र अर्थात् शिर अत्युन्नत था, कुक्षि—बकरीकी कुक्षिके सदृश अलम्ब (छोटी) थी, उस रूपके ओष्ठ और हस्त—गणेशके समान दीर्घ, दांत—अभ्युद्गतकुड्मल (खिलनेपर आई एक कली) और मालतीकी बेलके समान निर्मल और धवल सुवर्णके बन्धनमें प्रविष्ट थे, उस हस्तीरूपकी शुण्ड (सूंड) नामित धनुषके सदृश सुन्दर तथा कुटिल थी, प्रतिपूर्ण चरण २० नखोंके समेत कूर्मके समान थे और पुच्छ आलीन प्रमाण युक्त थी ॥ १०१ ॥

मत्तं मेहमिव गुलगुलेन्तं मणपवण जइणवेगं दिव्वं हत्थिरूवं विउव्वइ, २ त्ता जेणेव पोसहसाला जेणेव कामदेवे समणोवासए तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता कामदेवं समणोवासयं एवं वयासी । "हं भो काम-

देवा समणोवासया, तहेव भणइ जाव न भञ्जेसि, तो ते अज्ज अहं सोण्डाए गिण्हामि, २ त्ता पोसह-सालाओ नीणेमि, २ त्ता उड्ढं वेहासं उविहामि, २ त्ता तिक्खेहिं दन्तमुसलेहिं पडिच्छामि, २ त्ता अहे धरणि तलंसि तिक्खुत्तो पाएसु लोलेमि, जहा णं तुमं अट्टदुहट्टवसट्टे अकाले चेव जीवियाओ ववरोविज्जसि" ॥ १०२ ॥

मत्तमेघके समान गर्जते हुये, मन और पवनके वेगको जयन करते हुये दिव्य हस्तिके रूपको धारण करके, जहां पोषधशाला थी और जहां कामदेव श्रमणोपासक था वहां जाकर कामदेव श्रमणोपासकको ऐसे बोला। हे श्रमणोपासक कामदेव! यदि तू शीलादिको यावत् भंग न करेगा (उसी प्रकार ही कहा) तो मैं आज तुझे शूण्डसे पकड़कर पोषध-शालासे लेजाकर उच्चवायुमें फैंकूंगा, ऐसा करके तीक्ष्ण दन्त-मुषलोंपर ग्रहण करूंगा, ऐसा करके नीचे पृथ्वीपर तीन वार पाओंके नीचे मर्दन करूंगा (मलूंगा) जिससे तू आर्त और दुःखके वश होकर असमय जीवनसे मुक्त हो जावेगा ॥१०२॥

तएणं से कामदेवे समणोवासए तेणं देवेणं हत्थि-रूवेणं एवं वुत्ते समाणे, अभीए जाव विहरइ॥१०३॥

तब वह कामदेव श्रमणोपासक उस हस्तिरूप देवतासे ऐसा कहा जानेपर भयरहित (यावत्) धर्मध्यानमें स्थिर रहा॥१०३॥

तएणं से देवे हत्थिरूवे कामदेवं समणोवासयं अभीयं जाव विहरमाणं पासइ, २ त्ता दोच्चं पि तच्चं पि कामदेवं समणोवासयं एवं वयासी । "हं भो कामदेवा" तहेव जाव सोवि विहरइ ॥ १०४ ॥

तब वह हस्तिरूप देवता कामदेव श्रमणोपासकको अभीत (यावत्) विचरते हुये देखकर दो तीन वार कामदेव श्रमणोपासकको ऐसे बोला। भो कामदेव! उसी प्रकार कहा। यावत् वह धर्ममें दृढ रहा ॥ १०४ ॥

तएणं से देवे हत्थिरूवे कामदेवं समणोवासयं अभीयं जाव विहरमाणं, २ त्ता आसुरत्ते ४ कामदेवं समणोवासयं सोंडाए गिण्हेइ, २ त्ता उड्ढं वेहासं उव्विहइ, २ त्ता तिक्खेहिं दन्तमुसलेहिं पडिच्छइ, २ त्ता अहे धरणितलंसि तिक्खुत्तो पाएसु लोलेइ ॥

तब उस हस्तिरूप देवताने कामदेव श्रमणोपासकको अभीत (यावत्) विचरते हुये देखकर क्रोधमें भरकर कामदेव श्रमणोपासकको शूण्डसे पकड़कर, ऊपर फैंककर, तीक्ष्ण दन्तमुषलोंपर ग्रहण किया और फिर धरतिपर पाओंके नीचे मर्दन किया ॥ १०५ ॥

तएणं से कामदेवे समणोवासए तं उज्जलं जाव अहियासेइ ॥ १०६ ॥

तब उस कामदेव श्रमणोपासकने उस अग्निमय (यावत्) वेदनाको सहन किया ॥ १०६ ॥

तएणं से देवे हत्थिरूवे कामदेवं समणोवासयं जाहे नो संचाएइ जाव सणियं सणियं पच्चोसक्कइ, २ त्ता पोसहसालाओ पडिणिक्खमइ, २ त्ता दिव्वं हत्थिरूवं विप्पजहइ, २ त्ता एगं महं दिव्वं सप्परूवं विउव्वइ, उग्गविसं चण्डविसं घोरविसं महाकायं मसीमूसाकालगं नयणविसरोसपुण्णं अञ्जणपुञ्जनिगरप्पगासं रत्तच्छं लोहियलोयणं जमल जुयल चञ्चलजीहं धरणीयलवेणिभूयं उक्कड फुड कुडिल जडिल कक्कस वियड फुडाडोव करण दच्छं ॥ १०७ ॥

तब उस हस्तिरूप देवताने अपने आपको कामदेव श्रमणोपासकको धर्मसे विपरिणामित करनेके असमर्थ जानकर, शनैः शनैः पीछे हटकर पोषधशालासे निकलकर दिव्यहस्तिरूपको त्यागकर एक महान् दिव्य सर्परूपको धारण किया। उसका रूप उग्र, चण्ड तथा घोरविषसे युक्त था और महा शरीर मूषिक या स्याहीके समान काला था, दृष्टिविष रोष

(क्रोध) से पूर्ण थी, अञ्जनपुंज समूहके समान उसका प्रकाश था, नेत्र रुधिरके समान रक्ताक्त थे और दो जिह्वा समस्थ चपल थीं, अपरंच उसका स्वरूप (कृष्णत्व और दीर्घत्वमें) पृथ्वीके केश-बन्धके समान दीखता था और उत्कृष्ट स्फुट कुटिल जटिल कर्कश विकट फणाडम्बर करनेमें वह दक्ष और तत्पर था ॥ १०७

लोहागरधम्ममाणधमधमेन्तघोसं अणागलियतिव्वचण्डरोसं सप्परूवं विउव्वइ, २ त्ता जेणेव पोसहसाला जेणेव कामदेवे समणोवासए, तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता कामदेवं समणोवासयं एवं वयासी । "हं भो कामदेवा समणोवासया, जाव न भञ्जेसि, तो ते अज्जेव अहं सरसरस्स कायं दुरुहामि, २ त्ता पच्छिमेणं भाएणं तिक्खुत्तो गीवं वेढेमि, २ त्ता तिक्खाहिं विसपरिगयाहिं दाढाहिं उरंसि चेव निकुट्टेमि, जहा णं तुमं अट्टदुहट्टवसट्टे अकाले चेव जीवियाओ ववरोविज्जसि" ॥ १०८ ॥

लोहाकरकी धौंकनीके धमधम शब्दके समान शब्द करते हुये और अनाकलित तीव्र और चण्ड क्रोधको प्रकट करते हुये सर्परूपको धारण करके, जहां पोषधशाला और श्रमणोपासक कामदेव था, वहां जाकर कामदेव श्रमणोपासकको

ऐसे बोला। हे श्रमणोपासक कामदेव ! यदि तू शीलादिको भंग न करेगा, तो मैं आज रेंगते हुये तेरे शरीर पर चढ जाऊंगा, ऐसा करके पुच्छसे तीनवार कंठको परिवेष्टन करूंगा फिर तीक्ष्ण विषपरिगत (विषसे भरे हुये) दंष्ट्राओंसे तेरे हृदयमें प्रहार करूंगा जिससे तू आर्त और दुःखके वश होकर अस-मय जीवनसे विमुक्त हो जावेगा ॥ १०८ ॥

तए णं से कामदेवे समणोवासए तेणं देवेणं सप्परूवेणं एवं वुत्ते समाणे, अभीए जाव विहरइ ॥ सो वि दोच्चं पि तच्चं पि भणइ, कामदेवो वि जाव विहरइ ॥ १०९ ॥

तब वह कामदेव श्रमणोपासक उस सर्परूप देवतासे ऐसा कहा जानेपर भी अभीत (यावत्) धर्मध्यानमें स्थिर रहा। देवताने उसी प्रकारही दो तीनवार कहा परन्तु कामदेव भी यावत् अभीत यावत् धर्ममें दृढ रहा ॥ १०९ ॥

तए णं से देवे सप्परूवे कामदेवं समणोवासयं अभीयं जाव पासइ, २ त्ता आसुरत्ते ४ कामदेवस्स समणोवासयस्स सरसरस्स कायं दुरुहइ, २ त्ता पच्छिमभाएणं तिक्खुत्तो गीवं वेढेई, २ त्ता तिक्खाहिं विस-परिगयाहिं दाढाहिं उरंसि चेव निकुट्टेइ ॥ ११० ॥

तब वह सर्परूप देवता कामदेव श्रमणोपासकको भयरहित (यावत्) देख करके क्रोधसे कामदेव श्रमणोपासकके शरीरपर रेंगते हुये चढ़गया, ऐसा करके पुच्छसे तीनबार कंठको वेष्टित किया फिर तीक्ष्ण विषयुक्त दाढोंसे हृदयमें प्रहार किया ॥ ११० ॥

तए णं से कामदेवे समणोवासए तं उज्जलं जाव अहियासेइ ॥ १११ ॥

तब उस कामदेव श्रमणोपासकने उस अग्निमय यावत् वेदनाको सम्यक् प्रकारसे सहन किया ॥ १११ ॥

तएणं से देवे सप्परूवे कामदेवं समणोवासयं अभीयं जाव पासइ, २ त्ता जाहे नो संचाएइ कामदेवं समणोवासयं निग्गन्थाओ पावयणाओ चालित्तए वा खोभित्तए वा विपरिणामित्तए वा, ताहे सन्ते ३ सणियं सणियं पच्चोसक्कइ, २ त्ता पोसहसालाओ पडिणिक्खमइ, २ त्ता दिव्वं सप्परूवं विप्पजहइ, २ त्ता एगं महं दिव्वं देवरूवं विउव्वइ हारविराइयवच्छं जाव दसदिसाओ उज्जोवेमाणं पभासेमाणं पासाईयं दरिसणिज्जं अभिरूवं पडिरूवं ॥ ११२ ॥

तब उस सर्परूप देवताने कामदेव श्रमणोपासकको अभीत

(यावत्) विचरते हुए देखकर विचार किया—"मैं कामदेव श्रमणोपासकको धर्मसे चलायमान क्षोभित वा विपरिणामित करनेके समर्थ नहीं हूं" ऐसे विचारकर श्रान्त होकर शनैः शनैः पीछे हटकर पोषधशालासे निकलकर दिव्यसर्परूपको त्यागकर एक महान् दिव्य देवरूपको धारण किया, उस देवरूपकी छाती हारादिसे सुशोभित थी, यावत् वह चित्ताल्हादक, दर्शनीय, मनोज्ञ, वा मनोहररूप दश दिशाओंमें उद्योत तथा प्रकाश करता था और शोभा देता था ॥११२॥

दिव्वं देवरूवं विउव्वइ, २ त्ता कामदेवस्स समणोवासयस्स पोसहसालं अणुप्पविसइ, २ त्ता अन्तलिक्खपडिवन्ने सखिङ्खिणियाइं पञ्चवण्णाइं वत्थाइं पवरपरिहिए कामदेवं समणोवासयं एवं वयासी। "हं भो कामदेवा समणोवासया, धन्ने सि णं तुमं, देवाणुप्पिया, सम्पुण्णे कयत्थे कयलक्खणे, सुलद्धे णं तव, देवाणुप्पिया, माणुस्सए जम्मजीवियफले, जस्स णं तव निग्गन्थे पावयणे इमेयारूवा पडिवत्ती लद्धा पत्ता अभिसमन्नागया। एवं खलु, देवाणुप्पिया, सक्के देविन्दे देवराया जाव सक्कंसि सीहा-

सयांसि चउरासीईए सामाणिय साहस्सीणं जाव अन्नेसिं च बहूणं देवाण य देवीण य मज्झगए एव-माइक्खइ ४। " "एवं खलु, देवा, जम्बुद्दीवे दीवे भारहे वासे चम्पाए नयरीए कामदेवे समणोवासए पोसहसालाए पोसहिए बम्भचारी जाव दब्भसंथा-रोवगए समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तियं धम्मपण्णत्तिं उवसम्पज्जित्ताणं विहरइ। नो खलु से सक्का केणइ देवेण वा दाणवेण वा जाव गन्धव्वेण वा निग्गन्थाओ पावयणाओ चालित्तए वा खोभि-त्तए वा विपरिणामित्तए वा"" । तएणं अहं सक्क-स्स देविन्दस्स देवरणो एयमट्ठं असद्दहमाणे ३ इहं हव्वमागए। तं अहो णं, देवाणुप्पिया, इड्ढी ६ लद्धा ३, तं दिट्ठा णं, देवाणुप्पिया, इड्ढी जाव अभिसम-न्नागया। तं खामेमि णं, देवाणुप्पिया, खमन्तु मज्झ देवाणुप्पिया, खन्तुमरुहन्ति णं देवाणुप्पिया, नाइं भुज्जो करणयाए" त्ति कट्टु पायवडिए पञ्जलिउडे एय-मट्ठं भुज्जो भुज्जो खामेइ, २ त्ता जामेवदिसं पाउ-ब्भूए, तामेव दिसं पडिगए ॥ ११३ ॥

ऐसे दिव्य देवताके रूपको धारणकर, कामदेव श्रमणोपासकके पास पोषधशालामें प्रवेश करके, आकाशमें स्थित होकर, क्षुद्र (छोटी) घण्टिकायुक्त पांचवर्णके श्रेष्ठ वस्त्रोंसे परिहित होकर कामदेव श्रमणोपासकको (वह देवता) ऐसे बोला। "हे कामदेव श्रमणोपासक ! तू धन्य है, हे देवानुप्रिय ! तू संतोषी, कृतार्थ वा शुभलक्षणीक है, हे देवानुप्रिय ! तूने मनुष्य जातिमें जन्म तथा जीवनके फलको प्राप्तकर लिया है क्योंकि तूंने निर्ग्रन्थियोंके वचनोंपर इतनी दृढता प्राप्त लब्ध वा सम्प्राप्त करली है। हे देवानुप्रिय ! शक्र नामक देवेन्द्र और देवराजने (यावत्) शक्र सिंहासनारूढ होकर ८४००० सामानिक यावत् अन्य देवता वा देवियोंके मध्यमें इस प्रकार कहा था। हे देवानुप्रियो! निश्चय करके जम्बुद्वीपके अन्तर्गत भारतवर्षमें चम्पा नामा नगरीमें ब्रह्मचारी कामदेव श्रमणोपासक पोषधशालामें दर्भ घासपर श्रमण भगवान् महावीरजीके पास ग्रहण किये हुये धर्मको पालता हुआ रहता है॥ सत्यता कोई देवता, दानव यावत् गन्धर्व उसको जिन प्रवचनोंसे चलायमान, क्षुभित वा विपरिणामित करने को समर्थ नहीं है"। तब मैं शक्रेन्द्रकी इस बातपर श्रद्धा न करके शीघ्रही इधर आगया। अहो ! देवानुप्रिय ! तूने ऋद्धि प्राप्त कर ली है और अब मैंने देखा है कि तू सफलीभूत हुआ है, इस कारण, हे देवानुप्रिय ! मैं क्षमा मांगता हूं अतः आप मुझे

क्षमाकरें क्योंकि देवानुप्रियको क्षमा करना ही उचित है, आगे कदापि मैं ऐसा न करूंगा। ऐसे कहकर वह देवता पाओंपर गिर पड़ा और प्राञ्जलिभूत होकर (हाथ जोड़कर) पुनः पुनः कुचालकी क्षमा ग्रहण करके जिस दिशासे प्रकट हुआ था उसी दिशाको चला गया ॥ ११३ ॥

तएणं से कामदेवे समणोवासए "निरुवसग्गम्" इइ कट्टु पडिमं पारेइ ॥ ११४ ॥

तब उस कामदेव श्रमणोपासकने निरुपसर्ग अर्थात् परिषहसे मुक्त होकर धर्मका पालन किया ॥ ११४ ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे जाव विहरइ ॥ ११५ ॥

उस काल, उस समय श्रमण भगवान् महावीरजी (यावत) वहां पधारे ॥ ११५ ॥

तएणं से कामदेवे समणोवासए इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे "एवं खलु समणे भगवं महावीरे जाव विहरइ, तं सेयं खलु मम समणं भगवं महावीरं वन्दित्ता नमंसित्ता तओ पडिणियत्तस्स पोसहं पारित्तए" त्ति कट्टु एवं सम्पेहेइ, २ त्ता सुद्धप्पावेसाइं वत्थाइं जाव अप्पमहग्घ जाव मणुस्सवग्गुरा परि-

क्खित्ते सयाओ गिहाओ पडिणिक्खमइ, २ त्ता च
चम्पं नगरिं मज्झं मज्झेणं निग्गच्छइ, २ त्ता जेणेव
पुण्णभद्दे चेइए जहा सङ्खो जाव पज्जुवासइ ॥ ११६ ॥

तब उस कामदेव श्रमणोपासकने यह समाचार प्राप्त करके मनमें ऐसा विचार किया । "निश्चयसे श्रमण भगवान् महावीरजी (यावत्) यहां पधारे हैं, इसलिये श्रेष्ठ हो यदि मैं श्रमण भगवान् महावीरजीको वन्दना नमस्कार करके वहांसे वापिस लौटकर पोषधोपवास सेवन करूं" ऐसा विचारकर शुद्ध वस्त्र यावत् हलके और बहुमूल्य आभरण शरीर पर अलङ्कृत करके, मनुष्यवर्गसे परिक्षिप्त हुआ २ अपने घरसे निकला, और चम्पा नगरीके मध्यसे पूर्णभद्र उद्यानमें जाकर उसने सङ्खके समान यावत् श्रमण भगवान्जीकी सेवा भक्ति की॥ ११६॥

तएणं समणे भगवं महावीरे कामदेवस्स समणोवासयस्स तीसे य जाव धम्मकहा समत्ता ॥ ११७ ॥

तब श्रमण भगवान् महावीरजीने कामदेव श्रमणोपासकको और उसके सहचरोंको धर्मोपदेश दिया यावत् समाप्त होनेपर श्रोतागण लौट गये ॥ ११७ ॥

"कामदेवा" इ समणे भगवं महावीरे कामदेवं समणोवासयं एवं वयासी । "से नूणं, कामदेवा, तुब्भं पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि एगे देवे अन्तिए

पाउब्भूए । तएणं से देवे एगं महं दिव्वं पिसायरूवं विउव्वइ, २ त्ता आसुरत्ते ४ एगं महं नीलुप्पल जाव असिं गहाय तुमं एवं वयासी । " " हं भो काम-देवा जाव जीवियाओ ववरोविज्जसि" "। तं तुमं तेणं देवेणं एवं वुत्ते समाणे अभीए जाव विहरसि" ॥ एवं वण्णगरहियातिण्णि वि उवसग्गा तहेव पडिउच्चारेयव्वा जाव देवो पडिगओ॥ "से नूणं कामदेवा अट्ठे समट्ठे"?।

"हन्ता, अत्थि" ॥ ११८ ॥

(कामदेवकी तरफ मुखातिब होकर) श्रमण भगवान् महावीरजी कामदेव श्रमणोपासकको ऐसे बोले ॥ हे कामदेव ! निश्चयसे क्या तेरे पास अर्ध रात्रिके समय एक देवता प्रगट हुआ था ? उस देवताने एक महादिव्य पिशाचरूपको धारण करके क्रोधसे एक महान् नीलोत्पल यावत् असिको ग्रहण करके तुझे ऐसे कहा। " " हे कामदेव ! यदि तू शीलादिको भंग न करेगा तो यावत् जीवनसे मुक्त हो जावेगा " " । तब तूं उस देवतासे ऐसा कहा जानेपर भयरहित यावत् धर्ममें स्थिर रहा ॥ इसके अनंतर तीनोंही उपसर्गोंका वृत्तांत उसी प्रकार उच्चारण करना चाहिये यावत् देवता चला गया ॥ हे कामदेव ! निश्चयसे क्या यह बात सत्य है ? ॥ (कामदेवने उत्तर दिया) हे भगवन् ! "यथार्थ है" ॥ ११८ ॥

"अज्जो" इ समणे भगवं महावीरे बहवे समणे निग्गन्थे य निग्गन्थीओ य आमन्तेत्ता एवं वयासी। " जइ ताव, अज्जो, समणोवासगा गिहिणो गिहिमज्झा वसन्ता दिव्वमाणुसतिरिक्ख जोणिए उवसग्गे सम्मं सहन्ति जाव अहियासेन्ति, सक्का पुणाइं, अज्जो, समणेहिं निग्गन्थेहिं दुवालसङ्गं गणिपिडगं अहिज्जमाणेहिं दिव्वमाणुसतिरिक्ख जोणिए सम्मं सहित्तए जाव अहियासित्तए" ॥ ११९ ॥

श्रमण भगवान् महावीरजी बहुत श्रमण, नैर्ग्रन्थ और साध्वीयोंको बुलाकर ऐसे बोले । " हे आर्यो ! यदि श्रमणोपासक गृहस्थी गृहमें रहते हुये भी देव, मनुष्य वा तिर्यञ्चयोनिक उपसर्गोंको सम्यक् प्रकारसे सहन करते हैं तो फिर, हे आर्य्यो ! निर्ग्रन्थियोंको जो द्वादशांगके छात्र हैं अवश्यमेव पूर्ण शान्तिके साथ देव, मनुष्य और तिर्यञ्च योनिक उपसर्ग श्रेष्ठ रीतिसे सहन करने चाहियें ॥ ११९ ॥

तओ ते बहवे समणा निग्गन्था य निग्गन्थीओ य समणस्स भगवओ महावीरस्स "तह"त्ति एयमट्ठं विणएणं पडिसुणन्ति ॥ १२० ॥

तब सब श्रमण नैर्ग्रन्थ वा साध्वीयोंने श्रमण भगवान्

महावीरजीके, ("सत्य है" ऐसा वचन उच्चारण करके) इस अर्थको विनयसे श्रवण किया ॥ १२० ॥

तएणं से कामदेवे समणोवासए हट्ठ जाव समणं भगवं महावीरं पसिणाइं पुच्छइ, अट्ठमादियइ, समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो वन्दइ नमंसइ, २ त्ता जामेव दिसं पाउब्भूए, तामेव दिसं पडिगए ॥ १२१ ॥

तब वह कामदेव श्रमणोपासक प्रसन्न होकर यावत् श्रमण भगवान् महावीरजीसे प्रश्न पूछकर और उत्तर ग्रहण करके श्रमण भगवान् महावीरजीको तीनवार वन्दना नमस्कार करके जिस दिशासे प्रगट हुआ था उसी दिशाको चला गया ॥१२१॥

तएणं समणे भगवं महावीरे अन्नया कयाइ चम्पाओ पडिणिक्खमइ, २ त्ता बहिया जणवयविहारं विहरइ ॥ १२२ ॥

तब श्रमण भगवान् महावीरजी अन्यदा समय चम्पा नगरीसे निकलकर बाहिर अन्य देशको विहारकर गये ॥१२२॥

तएणं से कामदेवे समणोवासए पढमं उवासगपडिमं उवसम्पज्जित्ताणं विहरइ ॥ १२३ ॥

तब वह कामदेव श्रमणोपासक उपासककी प्रथम प्रतिज्ञा को पालता हुआ विचरने लगा ॥ १२३ ॥

तएणं से कामदेवे समणोवासए बहूहिं जाव भावेत्ता वीसं वासाइं समणोवासग परियागं पाउणित्ता, एक्कारस उवासग पडिमाओ सम्मं काएणं फासेत्ता, मासियाए संलेहणाए अप्पाणं झूसित्ता, सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदेत्ता, आलोइय पडिक्कन्ते, समाहिपत्ते, कालमासे कालं किच्चा, सोहम्मे कप्पे सोहम्म वडिंसयस्स महाविमाणस्स उत्तरपुरत्थिमेणं अरुणाभे विमाणे देवत्ताए उववन्ने। तत्थणं अत्थेगइयाणं देवाणं चत्तारि पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। कामदेवस्स वि देवस्स चत्तारि पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता ॥ १२४ ॥

तब उस कामदेव श्रमणोपासकने बहुत शीलव्रतसे अपना कल्याण किया, वीस वर्षतक श्रमणोपासककी पर्यायको पाला, उपासककी एकादश प्रतिज्ञाओंको श्रेष्ठ रीतिसे कायासे पालन किया, मासिक संलेखनाकी जूषणाको जूषित करके, ६० प्रकारके अन्नसे पृथक् रहकर आलोचना और प्रतिक्रमण करके समाधि प्राप्तकी और कालके अवसरपर मृत्यु पाकर सौधर्म्म

कल्पमें सौधर्म्मावतंसक महाविमानके उत्तरपूर्वके मध्यकी दिशामें अरुणाभ विमानमें देवता उत्पन्न हुआ। वहां कितनेक देवताओंकी चार पल्योपमकी स्थिति कही हैं। कामदेव देवताकी भी चार पल्योपमकी स्थिति हुई है ॥ १२४ ॥

"से णं, भन्ते, कामदेवे ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं अणन्तरं चयं चइत्ता, कहिं गमिहिइ, कहिं उववज्जिहिइ"?

"गोयमा, महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ" ॥१२५॥

(गौतमजीने पूछा) हे भगवन्! वह कामदेव उस देवलोकसे आयु, भव, स्थिति क्षय करके अनन्तर कहां जावेगा और कहां उत्पन्न होगा?"

(भगवान्ने उत्तर दिया) "हे गौतम! महाविदेह क्षेत्रमें सिद्ध होगा" ॥ १२५ ॥

॥ निक्खेवो ॥

(निक्षेपः)

सत्तमस्स अंगस्स उवासगदसाणं बीयं अज्झयणं समत्तं ॥

॥ सप्तमांग उपासकदशाका द्वितीय अध्ययन समाप्त हुआ ॥

तइयं अज्झयणं ।

तृतीय अध्ययन

उक्खेवो तइयस्स अज्झयणस्स ॥

तृतीय अध्ययनका उत्क्षेप[1] ।

एवं खलु, जम्बू, तेणं कालेणं तेणं समएणं वाणारसी नामं नयरी। कोट्ठए चेइए। जियसत्तूराया ॥१२६॥

हे जम्बू! निश्चयसे उस काल, उस समय बनारस नामवाली एक नगरी थी। उसमें कोष्टक उद्यान था। वहां जितशत्रु राजा राज्य करता था ॥ १२६ ॥

तत्थ णं वाणारसीए नयरीए चुलणीपिया नामं गाहावई परिवसइ अड्ढे जाव अपरिभूए। सामा भारिया। अट्ठ हिरण्णकोडीओ निहाण पउत्ताओ, अट्ठ वड्ढि पउत्ताओ, अट्ठ पवित्थर पउत्ताओ, अट्ठ वया दसगोसाहस्सिएणं वएणं। जहा आणन्दो राईसर जाव सव्वकज्जवड्ढावए यावि होत्था। सामी समोसढे। परिसा निग्गया। चुलणीपिया वि जहा आणन्दो तहा निग्गओ। तहेव गिहिधम्मं पडिवज्जइ।

---

१ उक्षेप="जइ णं, भन्ते, समणेणं भगवया जाव सम्पत्तेणं उवासगदसाणं दोंचस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पणत्ते, तच्चस्स णं, भन्ते, के अट्ठे पणत्ते"।

गोयम पुच्छा। तहेव सेसं जहा कामदेवस्स जाव पोसहसालाए पोसहिए बम्भचारी समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तियं धम्मपण्णत्तिं उवसम्पज्जित्ताणं विहरइ ॥ १२७ ॥

उस बनारस नगरमें चुलणीपिता गाथापति (सेठ) रहता था जो अतिधनवान् यावत् अपरिभूत (बड़ा) था। श्यामा नामा उसकी भार्या थी। अष्ट करोड़ स्वर्ण मुद्रा निधान प्रयुक्त, अष्ट वृद्धिप्रयुक्त, अष्ट प्रविस्तर प्रयुक्त और आठवर्ग, (दशसहस्र गौका एक वर्ग) उसके पास थे। आनन्दके समान राजेश्वरोंका आधार यावत् सर्व कार्यकी उन्नतिका वह मुख्य कारण था। उस समय महावीर स्वामीजी पधारे, पुरुष दर्शनार्थ गए। चुलणीपिता भी आनन्दके समान गया और उसी प्रकारही उसने गृहस्थ धर्मको स्वीकार किया। उसी प्रकार गौतमजीने प्रश्न किया। कामदेवके समान उसी प्रकारही ब्रह्मचारी चुलणीपिता यावत् पोषधशालामें पोषध और श्रमण भगवान् महावीरजीके पास गृहीत धर्मको पालता हुआ रहने लगा ॥ १२७ ॥

तए णं तस्स चुलणीपियस्स समणोवासयस्स पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि एगे देवे अन्तियं पाउब्भूए १२८

तब उस चुलणीपिता श्रमणोपासकके पास अर्ध रात्रिके समय एक देवता प्रगट हुआ ॥ १२८ ॥

तए णं से देवे एगं नीलुप्पल जाव असिं गहाय चुलणीपियं समणोवासयं एवं वयासी। "हं भो चुलणीपिया समणोवासया जहा कामदेवो जाव न भञ्जसि, तो ते अहं अज्ज जेट्ठं पुत्तं साओ गिहाओ नीणेमि, २ त्ता तव अग्गओ घाएमि, २ त्ता तओ मंससोल्ले करेमि, २ त्ता आदाणभरियंसि कडाहयंसि अद्दहेमि, २ त्ता तव गायं मंसेण य सोणियेण य आयश्चामि, जहा णं तुमं अट्टदुहट्टवसट्टे अकाले चेव जीवियाओ ववरोविज्जसि" ॥ १२९ ॥

तब वह देवता एक नीलोत्पल यावत् तलवारको लेकर चुलणीपिता श्रमणोपासकको ऐसे बोला । हे चुलणीपिता श्रमणोपासक ! (कामदेवके समान कहा) यदि तूं यावत् शीलादिको भंग न करेगा तो मैं आज तेरे ज्येष्ठ पुत्रको तेरे घरसे निकालूंगा, ऐसा करके तेरे आगे उसको मारकर उसके मांसके तीन खंड करूंगा, फिर आदाण (उदक तैलादि) से भरे हुये कटाह (लोहमय भाजन) में दहन करूंगा, फिर मैं तेरे शरीरपर वह मांस और रुधिर सिञ्चन करूंगा (छिड़-

कूंगा) जिससे तूं आर्त और दुःखोंके वश होकर असमय मर जावेगा ॥ १२६ ॥

तए णं से चुलणीपिया समणोवासए तेणं देवेणं एवं वुत्ते समाणे अभीए जाव विहरइ ॥ १३० ॥

तब वह चुलणीपिता श्रमणोपासक उस देवतासे ऐसा कहा जानेपर भयरहित यावत् विचरता रहा ॥ १३० ॥

तएणं से देवे चुलणीपियं समणोवासयं अभीयं जाव पासइ, २ त्ता दोच्चं पि तच्चं पि चुलणीपियं समणोवासयं एवं वयासी। "हं भो चुलणीपिया समणोवासया," तं चेव भणइ, सो जाव विहरइ ॥१३१॥

तब वह देवता चुलणीपिता श्रमणोपासकको भयरहित (यावत्) देखकर दो तीनवार चुलणीपिता श्रमणोपासकको ऐसे बोला। "हे चुलणीपिता श्रमणोपासक!" (उसीप्रकारही कहा) परन्तु वह यावत् धर्ममें दृढ रहा ॥ १३१ ॥

तए णं से देवे चुलणीपियं समणोवासयं अभीयं जाव पासित्ता आसुरत्ते ४ चुलणीपियस्स समणोवासयस्स जेट्ठं पुत्तं गिहाओ नीणेइ, २ त्ता अग्गओ घाएइ, २ त्ता तओ मंससोल्लए करेइ, २ त्ता आदाणभरियंसि कडाहयंसि अद्दहेइ, २ त्ता चुलणीपियस्स

समणोवासयस्स गायं मंसेण य सोणिएण य आय-
ञ्चइ ॥ १३२ ॥

तब उस देवताने चुलणीपिता श्रमणोपासकको भयरहित यावत् देखकर क्रोधमें चुलणीपिता श्रमणोपासकके ज्येष्ठ पुत्रको घरसे निकालकर उसके आगे मारकर उसके मांसके तीन खण्ड करके, आदाणसे भरे हुये कटाहमें दग्ध किया और चुलणीपिता श्रमणोपासकके शरीरके ऊपर वह मांस और रुधिर छिड़का ॥ १३२ ॥

तए णं से चुलणीपिया समणोवासए तं उज्जलं जाव अहियासेइ ॥ १३३ ॥

तब उस चुलणीपिता श्रमणोपासकने उस अग्निमय यावत् वेदनाको श्रेष्ठरीतिसे सहन किया ॥ १३३ ॥

तए णं से देवे चुलणीपियं समणोवासयं अभीयं जाव पासइ, २ त्ता दोच्चं पि चुलणीपियं समणोवासयं एवं वयासी । "हं भो चुलणीपिया समणोवासया, अपत्थियपत्थिया जाव न भञ्जसि, तो ते अहं अज्ज मज्झिमं पुत्तं साओ गिहाओ नीणेमि २ त्ता तव अ-ग्गओ घाएमि," जहा जेट्ठं पुत्तं तहेव भणइ, तहेव करेइ ॥ एवं तच्चं पि कणीयसं जाव अहियासेइ ॥१३४॥

तब वह देवता चुलणीपिता श्रमणोपासकको भयरहित यावत् देखकर दूसरीबार चुलणीपिता श्रमणोपासकको ऐसे बोला। हे चुलणीपिता श्रमणोपासक! कुपथ इच्छक,! यदि तू शील यावत् भंग न करेगा तो मैं आज तेरे मध्यम पुत्रको तेरे घरसे निकालकर, तेरे आगे उसका वध करूंगा (आगे उसी प्रकारही कहा और किया जैसे ज्येष्ठ पुत्रके समय कहा और किया था)॥ ऐसे ही तृतीय बार कनीयस (छोटे) पुत्रके साथ वर्त्ताव किया यावत् चुलणीपिताने इन वेदनाओं को सहन किया॥ १३४॥

तएणं से देवे चुलणीपियं समणोवासयं अभीयं जाव पासइ, २त्ता चउत्थं पि चुलणीपियं समणोवासय एवं वयासी। "हं भो चुलणीपिया समणोवासया, अपत्थियपत्थिया ४, जइ णं तुमं जाव न भञ्जसि, तओ अहं अज्ज जा इमा तव माया भद्दा सत्थवाही देवयगुरुजणणी दुक्कर दुक्कर कारिया, तं ते साओ गिहाओ नीणेमि, २ त्ता तव अग्गओ घाएमि, २ त्ता तओ मंससोल्लए करेमि, २ त्ता आदाणभरियंसि कडाहयंसि अद्दहेमि, २ त्ता तव गायं मंसेण य सोणिएण या आयञ्चामि, जहा णं तुमं अट्टदुहट्टवसट्टे

अकाले चेव जीवियाओ ववरोविज्जसि" ॥ १३५ ॥

तब वह देवता चुलणीपिता श्रमणोपासकको भयरहित यावत् देखकर चतुर्थवार चुलणीपिता श्रमणोपासकको ऐसे बोला। हे चुलणीपिता श्रमणोपासक! अप्रार्थित प्रार्थिक! यदि तू यावत् शीलादिको भंग न करेगा तो मैं आज इस स्थानपर तेरी सार्थवाहिन्, देवगुरु समान जननी, दुष्कर कर्म करनेवाली माता भद्राको तेरे घरसे निकालकर तेरे आगे उसका वध करूंगा, ऐसा करके उसके मांसके तीन खण्ड करूंगा, फिर आदाणसे भरे हुये कटाहमें तप्त करके तेरे शरीरोपरि मांस और रुधिर सिञ्चन करूंगा जिससे तू आर्त और दुःखोंके वश होकर असमय मर जावेगा ॥ १३५ ॥

तएणं से चुलणीपिया समणोवासए तेणं देवेणं एवं वुत्ते समाणे अभीए जाव विहरइ ॥ १३६ ॥

तब वह चुलणीपिता श्रमणोपासक उस देवतासे ऐसा कहा जानेपर अभीत यावत् धर्ममें स्थिर रहा ॥ १३६ ॥

तएणं से देवे चुलणीपियं समणोवासयं अभीयं जाव विहरमाणं पासइ, २ त्ता चुलणीपियं समणोवासयं दोच्चं पि तच्चं पि एवं वयासी। "हं भो चुलणीपिया समणोवासया तहेव जाव ववरोविज्जसि"॥१३७॥

तब वह देवता चुलणीपिता श्रमणोपासकको भयरहित यावत् विचरता हुआ देखकर चुलणीपिता श्रमणोपासकको दो तीनवार ऐसे बोला। "हे चुलणीपिता श्रमणोपासक! (उसी प्रकार कहा) यावत् जीवनसे विमुक्त हो जावेगा" ॥ १३७ ॥

तएणं तस्स चुलणीपियस्स समणोवासयस्स तेणं देवेणं दोच्चं पि तच्चं पि एवं वुत्तस्स समाणस्स इमेयारूवे अज्झत्थिए ५। "अहोणं इमे पुरिसे अणारिए अणारियबुद्धी अणारियाइं पावाइं कम्माइं समायरइ, जेणं ममं जेट्ठं पुत्तं साओ गिहाओ नीणेइ, २ त्ता मम अग्गओ घाएइ, २ त्ता जहा कयं तहा चिन्तेइ जाव गायं आयश्चइ, जेणं मम मज्झिमं पुत्तं साओ गिहाओ जाव सोणिएण य आयश्चइ, जेणं ममं कणीयसं पुत्तं साओ गिहाओ तहेव जाव आयश्चइ, जा वि य णं इमा ममं माया भद्दा सत्थवाही देवयगुरुजणणी दुक्कर दुक्कर कारिया, तं पि य णं इच्छइ साओ गिहाओ नीणेत्ता मम अग्गओ घाएत्तए, तं सेयं खलु ममं एयं पुरिसं गिण्हित्तए" त्ति कट्टु उट्ठाइए, से वि य आगासे उप्पइए, तेणं च खम्भे आसाइए, महया महया सद्देणं कोलाहले कए॥१३८॥

तब उस देवतासे दोतीनवार इस प्रकार कहे जांनेपर चुलणीपिता श्रमणोपासकके मनमें अध्यास्थित संकल्प उत्पन्न हुआ। "अहो! आश्चर्य है यह अनार्य्य, अनार्य्य बुद्धिवाला पुरुष अनार्य पाप कर्म करता है जिसमें मेरे ज्येष्ठ पुत्रको मेरे घरसे निकालकर इसने मेरे आगे मारकर मांसके तीन खण्ड करके आदाणसे पूरित कटाहमें उनको दग्ध करके, मांस और रुधिरको मेरे ऊपर छिड़का अतः मेरे मध्यम पुत्रको भी मेरे गृहसे निकालकर यावत् रुधिरको सिञ्चन किया और मेरे कनीयस पुत्रको मेरे गृहसे निकालकर उसी प्रकार ही यावत् छिड़का है अपरंच अब मेरी सार्थवाहिन् देवगुरुसमान जननी, दुष्कर कर्म कर्त्ता (मेरी रक्षा करनेवाली) माता भद्राको भी मेरे गृहसे निकालकर मेरे आगे वध करना चाहता है. इस लिये श्रेष्ठ हो यदि मैं इस पुरुषको पकड़ूं,"। ऐसा विचार करके वह उठा, वह देवता आकाशमें भाग गया और उसके हाथमें स्तम्भ आगया (जिस कारण) उसने महा शब्दसे कोलाहल किया ॥ १३८॥

तएणं सा भद्दा सत्थवाही तं कोलाहल सद्दं सोच्चा निसम्म जेणेव चुलणीपिया समणोवासए तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता चुलणीपियं समणोवासयं एवं वयासी। "किणं, पुत्ता, तुमं महया महया सद्देणं कोलाहले कए?" ॥ १३९ ॥

तब सार्थवाहिनी माता भद्रा उस कोलाहल शब्दको सुनकर, जहा चुलणीपिता श्रमणोपासक था, वहां जाकर, चुलणीपिता श्रमणोपासकको ऐसे बोली । " हे पुत्र ! किस कारण तू ने महा शब्दसे कोलाहल किया है ?" ॥ १३९ ॥

तएणं से चुलणीपिया समणोवासए अम्मयं भद्दं सत्थवाहिं एवं वयासी । " एवं खलु, अम्मो, न जाणामि, केवि पुरिसे आसुरत्ते ५ एगं महं नीलुप्पल जाव असिं गहाय ममं एवं वयासी, " " हं भो चुलणीपिया समणोवासया, अपत्थियपत्थिया ४ वज्जिया, जइ णं तुमं जाव ववरोविज्जसि" " । अहं तेणं पुरिसेणं एवं वुत्ते समाणे अभीए जाव विहरामि । तएणं से पुरिसे ममं अभीयं जाव विहरमाणं पासइ, २ त्ता ममं दोच्चं पि तच्चं पि एवं वयासी, " " हं भो चुलणीपिया समणोवासया, " " तहेव जाव गायं आयञ्चइ । तएणं अहं तं उज्जलं जाव अहियासेमि । एवं तहेव उच्चारेयव्वं सव्वं जाव कणीयसं जाव आयञ्चइ। अहं तं उज्जलं जाव अहियासेमि । तएणं से पुरिसे ममं अभीयं जाव पासइ, २ त्ता ममं चउत्थं पि एवं

वयासी, " "हं भो चुलणीपिया समणोवासया, अप-त्थियपत्थिया, जाव न भञ्जसि तो ते अज्ज जा इमा माया गुरु जाव ववरोविज्जसि" "। तएणं अहं तेणं पुरिसेणं एवं वुत्ते समाणे अभीए जाव विहरामि। तएणं से पुरिसे दोच्चं पि तच्चंपि ममं एवं वयासी, " "हं भो चुलणीपिया समणोवासया अज्ज जाव ववरोविज्जसि" "। तएणं तेणं पुरिसेणं दोच्चं पि तच्चं पि ममं एवं वुत्तस्स समाणस्स इमेयारूवे अज्झ-त्थिए ५, " "अहोणं इमे पुरिसे अणारिए जाव स-मायरइ, जेणं ममं जेट्ठं पुत्तं साओ गिहाओ तहेव जाव कणीयसं जाव आयञ्चइ, तुब्भे वि य णं इच्छइ साओ गिहाओ नीणेत्ता मम अग्गओ घाएत्तए, तं सेयं खलु ममं एयं पुरिसं गिण्हित्तए" " त्ति कट्टु उट्ठाइए से वि य आगासे उप्पइए, मए वि य खम्भे आसाइए, महया महया सद्देणं कोलाहले कए"॥१४०॥

तब वृद्ध चुलणीपिता श्रमणोपासक माता भद्रा सार्थवा-हिनी को ऐसे बोला। "हे माता! निश्चयसे मैं नहीं जानता कि कौन पुरुष क्रोधमें एक महान् नीलोत्पल तलवार को प्र-

हण किये हुये ऐसे बोला। हे चुलणीपिता श्रमणोपासक! कुचालके इच्छुक! वर्जित! यदि तूं यावत् शील भंग न करेगा तो मृत्युको प्राप्त होगा। मैं उस पुरुषसे ऐसा कहा जानेपर भय रहित यावत् धर्ममें स्थिर रहा, तब उस पुरुषने मुझे भयरहित यावत् विचरता हुआ देखकर दो तीन वार फिर ऐसे कहा। " "हे चुलणीपिता श्रमणोपासक! (उसी प्रकार ही कहा) यावत् मांस और रुधिर छिड़का, तब मैंने उस अग्निमय यावत् वेदनाको सहन किया (आगे उसी प्रकार कहना चाहिये यावत् कनीयस यावत् सिञ्चन किया अर्थात्) इस प्रकार उसने तीनों पुत्रोंको मारकर मांसके तीन खण्ड करके उनको जलाकर मेरी देहपर छिड़का और मैंने उस अग्निमय वेदनाको भी यावत् सहन किया। तब वह पुरुष मुझे अभीत यावत् देखकर चतुर्थवार फिर ऐसे बोला। " "हे चुलणीपिता! श्रमणोपासक! कुपथ इच्छुक! यदि तूं यावत् शीलादि भंग न करेगा तो मैं आज तेरी गुरु समान माताको मारूंगा यावत् तूं जीवनको त्याग देगा" " तब मैं उस पुरुषसे ऐसा कहा जानेपर अभीत रहा। तब उस पुरुषने दो तीन वार मुझे ऐसे कहा। " "हे चुलणीपिता श्रमणोपासक! यदि तूं आज शील न तोड़ेगा तो यावत् जीवनसे मुक्त हो जावेगा " "। तब उस पुरुषसे इस प्रकार दो तीन वार कहे जानेपर मेरे मनमें यह अध्यास्थित संकल्प उत्पन्न हुआ। " "अहो! यह

अनार्य्य पुरुष यावत् पापकर्म करता है इसने मेरे ज्येष्ठ मध्यम और छोटे पुत्रोंको मेरे घरसे निकालकर और यावत् उनको दग्ध करके मांस और रुधिरको मेरे शरीरपर सिञ्चन किया था अब तुझे भी मेरे घरसे निकालकर मेरे आगे वध करना चाहता है इस लिये श्रेष्ठ हो यदि मैं इस पुरुषको पकडूं" " ऐसा विचारकर मैं उठा, वह आकाशमें भाग गया और मेरे हाथमें स्तम्भ आगया इस कारण मैंने महा शब्दसे कोलाहल किया" ॥ १४० ॥

तएणं सा भद्दा सत्थवाही चुलणीपियं समणोवासयं एवं वयासी । "नो खलु केइ पुरिसे तव जाव कणीयसं पुत्तं साओ गिहाओ नीणेइ, २ त्ता तव अग्गओ घाएइ, एस न केइ पुरिसे तव उवसग्गं करेइ, एस णं तुमे विदरिसणे दिट्ठे । तं णं तुमं इयाणिं भग्गव्वए भग्गनियमे भग्गपोसहे विहरसि । तं णं तुमं, पुत्ता, एयस्स ठाणस्स आलोएहि जाव पडिवज्जाहि" ॥ १४१ ॥

तब वह सार्थवाहिनी भद्रा चुलणीपिता श्रमणोपासकको ऐसे बोली । "निश्चयसे किसीभी पुरुषने तेरे ज्येष्ठ यावत्

कनीयस पुत्रोंको तेरे घरसे नहीं निकाला और तेरे आगे वध किया, वह कोई पुरुष नहीं है जिसने तेरा उपसर्ग (दुःख) किया, यह तुझे विदर्शन दृष्टि पड़ा। अब तूंने व्रत, नियम और पोषधको भंग कर दिया है। इसकारण तूं, हे पुत्र! इस स्थानकी आलोचना कर यावत् दण्ड ग्रहण कर" ॥ १४१ ॥

तए णं से चुलणीपिया समणोवासए अम्मगाए भद्दाए सत्थवाहीए "तह" त्ति एयमट्ठं विणएणं पडिसुणेइ, २ त्ता तस्स ठाणस्स आलोएइ जाव पडिवज्जइ ॥ १४२ ॥

तब उस चुलणीपिता श्रमणोपासकने सार्थवाहिनी माता भद्राकी ("तथास्तु" ऐसे वचन उच्चारण करके) इस बात को विनयसे सुनकर, उस स्थानकी आलोचनाकी यावत् दण्ड ग्रहण किया ॥ १४२ ॥

तए णं से चुलणीपिया समणोवासए पढमं उवासगपडिमं उवसम्पज्जित्ताणं विहरइ। पढमं उवासगपडिमं अहासुत्तं जहा आणन्दो जाव एक्कारस वि॥१४३॥

तब वह चुलणीपिता श्रमणोपासक उपासककी प्रथम प्रतिमा (प्रतिज्ञा) का सेवन करता हुआ विचरने लगा।

उपासककी प्रथम प्रतिज्ञाको आनन्दके समान यथासूत्र यावत् पालकर एकादशही प्रतिज्ञाओंको सेवन किया ॥१४३॥

तए णं से चुलणीपिया समणोवासए तेणं उरालेणं जहा कामदेवो जाव सोहम्मे कप्पे सोहम्मवडिंसगस्स महाविमाणस्स उत्तर पुरत्थिमेणं अरुणप्पभे विमाणे देवत्ताए उववन्ने। चत्तारि पीलओवमाइं ठिई पण्णत्ता। महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ ५ ॥ १४४ ॥

तब वह चुलणीपिता श्रमणोपासक उस उदार तपकर्म्म के द्वारा कामदेवके समान धूमनिकी तरह सूक गया यावत् काल करके सौधर्म्म कल्पमें सौधर्म्म अवतंसकके महाविमानके उत्तरपूर्वके मध्यकी दिशामें अरुणप्रभ विमानमें देवता उत्पन्न हुआ ॥ वहां चार पल्योपमकी स्थिति कही है। (देवलोकसे आयु क्षय करके) महाविदेह क्षेत्रमें आगेसिद्ध होगा (५)॥१४४॥

॥ निक्खेवो ॥

(निक्षेपः)

सत्तमस्स अंगस्स उवासगदसाणं तइयं अज्झयणं समत्तं ॥

सप्तमाङ्ग उपासकदशा का तृतीय अध्ययन समाप्त हुआ ॥

चउत्थं अज्झयणं ।

(चतुर्थ अध्ययन)

॥ उक्खेवओ चउत्थस्स अज्झयणस्स ॥

॥ चतुर्थ अध्ययन का उत्क्षेप ॥

एवं खलु, जम्बू, तेणं कालेणं तेणं समएणं बाणारसी नामं नयरी । कोट्ठए चेइए । जियसत्तू राया । सुरादेवे गाहावइ अड्ढे । छ हिरण्ण कोडीओ जाव छ वया दसगोसाहस्सिएणं वएणं । धन्ना भारिया । सामी समोसढे । जहा आणन्दो तहेव पडिवज्जइ गिहिधम्मं । जहा कामदेवो जाव समणस्स भगवओ महावीरस्स धम्मपण्णत्तिं उवसम्पजित्ताणं विहरइ ॥ १४५ ॥

हे जम्बू ! निश्चयसे उस काल उस समय बनारस नामा नगरी थी । उसमें कोष्टक उद्यान था । वहां जितशत्रु राजा राज्य करता था । वहा एक महाधनी सुरादेव गाथापति रहता था । ६ करोड़ सुवर्ण मुद्रा निधान प्रयुक्त यावत् ६ वर्ग, (प्रत्येक वर्ग दश सहस्र गौ का) उसके पास थे । उसकी धन्या नामा भार्या थी । श्रीवीरप्रभु वहां पधारे । आनन्द के समान उसी प्रकारही सुरादेवने गृहस्थ धर्म्म को अंगीकार

किया। कामदेवके समान यावत् श्रमण भगवान महावीरजी से ग्रहण किये हुए धर्म्मको पालता हुआ रहने लगा ॥ १४५ ॥

तए णं तस्स सुरादेवस्स समणोवासयस्स पुव्वरत्तावरत्त काल समयंसि एगे देवे अन्तियं पाउब्भवित्था ॥ १४६ ॥

तब उस सुरादेव श्रमणोपासकके पास अर्ध रात्रिके समय एक देवता प्रगट हुआ ॥ १४६ ॥

से देवे एगं महं नीलुप्पल जाव असिं गहाय सुरादेवं समणोवासयं एवं वयासी। "हं भो सुरादेवा समणोवासया, अपत्थियपत्थिया ४, जइ णं तुमं सीलाइं जाव न भञ्जसि, तो ते जेट्ठं पुत्तं साओ गिहाओ नीणेमि, २ त्ता तव अग्गओ घाएमि, २ त्ता पञ्च सोल्लए करेमि, आदाणभरियंसि कडाहयंसि अद्दहेमि, २ त्ता तव गायं मंसेण य सोणिएण य आयञ्चामि, जहा णं तुमं अकाले चेव जीवियाओ ववरोविज्जसि" ॥ एवं मज्झिमयं, कणीयसं; एक्केक्के पञ्च सोल्लया। तहेव करेइ, जहा चुलणीपियस्स; नवरं एक्केक्के पञ्च सोल्लया ॥ १४७ ॥

वह देवता एक महान् नीलोत्पल यावत् तलवारको ग्रहण करके सुरादेव श्रमणोपासकको ऐसे बोला । "हे अप्रार्थित ! प्रार्थिक ! सुरादेव श्रमणोपासक ! यदि तू शीलादिको यावत् भंग न करेगा तो मैं तेरे ज्येष्ठ पुत्रको तेरे गृहसे, निकालकर तेरे आगे उसका वध करूंगा अतः उसके शरीरके पांच खण्ड करूंगा । फिर आदाणसे पूरित कटाहमें दग्ध करके उसके रुधिर वा मांसको तेरे शरीरपर छिड़कूंगा, जिसकारण तू असमय जीवनसे विमुक्त हो जावेगा" ॥ पुनः उसी प्रकार मध्यम और कनीयस पुत्रके सम्बन्धमें कहा और एक एक शरीरके पांच भाग करनेका विचार प्रगट किया पश्चात् उसी प्रकारही उनके साथ वर्त्ताव किया जैसा चुलणीपिताके पुत्रोंके साथ कियाथा इतना विशेष कि शरीरके पांच पांच भाग किये ॥ १४७ ॥

तए णं से देवे सुरादेवं समणोवासयं चउत्थं पि एवं वयासी । "हं भो सुरादेवा समणोवासया अ-पत्थियपत्थिया ४ जाव न परिच्चयसि, तो ते अज्ज सरीरंसि जमगसमगमेव सोलस रोगायङ्के पक्खिवा-मि, तं जहा सासे कासे जाव कोढे, जहा णं तुमं अट्टदुहट्ट जाव ववरोविज्जसि" ॥ १४८ ॥

तब वह देवता सुरादेव श्रमणोपासकको चतुर्थ वार ऐसे बोला। हे कुपथ इच्छुक सुरादेव श्रमणोपासक! यदि तू यावत् शील का परित्याग नहीं करेगा तो मैं आज शीघ्र ही तेरे शरीरको १६ प्रकारके रोगोंसे पीड़ित करूंगा यथा—१ श्वास २ काश (खांसी) यावत् कोढ १६ जिसकारण आर्त और दुःखोंके वश होकर तूं जीवनको त्याग देगा ॥ १४८ ॥

तए णं से सुरादेवे समणोवासए जाव विहरइ ॥ १४६ ॥

तब वह सुरादेव श्रमणोपासक उसी प्रकार यावत् धर्ममें दृढ रहा ॥ १४६ ॥

एवं देवो दोच्चं पि तच्चं पि भणइ जाव " ववरोविज्जसि" ॥ १५० ॥

(पुनः उस देवताने उसी प्रकार दो तीन वार कहा जिसप्रकार ६५–६७ कहा था) यावत् जीवनसे विमुक्त हो जावेगा ॥ १५० ॥

तए णं तस्स सुरादेवस्स समणोवासयस्स तेणं देवेणं दोच्चं पि तच्चं पि एवं वुत्तस्स समाणस्स इमेयारूवे अज्झत्थिए ४। "अहो णं इमे पुरिसे अणारिए जाव समायरइ, जेणं ममं जेट्ठं पुत्तं जाव क-

णीयसं जाव आयश्चइ, जे वि य इमे सोलस रोगा-यङ्का, ते वि य इच्छइ मम सरीरगंसि पक्खिवित्तए, तं सेयं खलु ममं एयं पुरिसं गिण्हित्तए" त्ति कट्टु उट्ठाइए। से वि य आगासे उप्पइए। तेण य खम्भे आसाइए, महया महया सद्देणं कोलाहले कए॥१५१॥

तब दो तीन वार ऐसा कहे हुये सुरादेव श्रमणोपासकके मनमें इस रूपमें अध्यास्थित संकल्प उत्पन्न हुआ। "अहो! यह अनार्य्य पुरुष यावत् पापकर्ममें समाचरण करता है जिसमें इसने मेरे ज्येष्ठ पुत्रको यावत् कनीयस पुत्रको मारकर यावत् मांस और रुधिरको देहपर सिञ्चन किया है अपरञ्च अब मेरे शरीरको १६ प्रकारके रोगोंसे पीड़ित करना चाहता है, इस कारण श्रेष्ठ हो यदि मैं इस पुरुषको पकडूं"। ऐसा विचार कर वह उठा और वह देवता आकाशमें भाग गया। उस श्रावकके हाथमें स्तम्भ आगया, तब उसने महाशब्दसे कोलाहल किया ॥ १५१ ॥

तए णं सा धन्ना भारिया कोलाहलं सोच्चा निसम्म, जेणेव सुरादेवे समणोवासए, तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता एवं वयासी। "किणं, देवाणुप्पिया, तुब्भेहिं महया महया सद्देणं कोलाहले कए?" ॥ १५२ ॥

तब वह धन्या भार्या कोलाहलको सुनकर, जहां सुरादेव श्रमणोपासक था, वहां जाकर ऐसे बोली । "हे देवानुप्रिय! किस कारण तूंने महान् शब्दसे कोलाहल किया है?" ॥१५२॥

तए णं से सुरादेवे समणोवासए धन्नं भारियं एवं वयासी । "एवं खलु, देवाणुप्पिए, केवि पुरिसे" तहेव कहेइ जहा चुलणीपिया । धन्ना वि पडिभणइ जाव कणीयसं । "नो खलु, देवाणुप्पिया, तुब्भं केवि पुरिसे सरीरंसि जमगसमगं सोलस रोगायङ्के पक्खिवइ, एस न केवि पुरिसे तुब्भं उवसग्गं करेइ" । सेसं जहा चुलणीपियस्स तहा भणइ ॥ १५३ ॥

तब वह सुरादेव श्रमणोपासक धन्या भार्याको ऐसे बोला। "हे देवानुप्रिये! कोई पुरुष क्रोधमें एक महान् नीलोत्पल तलवारको ग्रहण किये हुए मुझे ऐसे बोला । हे सुरादेव श्रमणोपासक! अप्रार्थित प्रार्थिक! वर्जित! यदि तू शीलादिको भंग न करेगा तो यावत् असमय मृत्युको प्राप्त करेगा इत्यादि अर्थात् चुलणीपिताके समान सर्व वृत्तांत कह सुनाया तब धन्या भार्याने प्रत्युत्तर दिया । हे देवानुप्रिय! निश्चयसे किसी पुरुषनेभी यावत् तेरे ज्येष्ठ, मध्यम तथा कनीयस पुत्रको तेरे गृहसे निकालकर तेरे आगे वध करके यावत् मांस

और रुधिरको सिञ्चन नहीं किया है वह कोई पुरुष नहीं था जो तेरे शरीरको १६ प्रकारके रोगोंसे पीड़ित करनेकी इच्छा करता था, ऐसा किसी पुरुषने तेरा उपसर्ग नहीं किया है," (शेष उसी प्रकार चुलणीपिताके समान कहा) ॥ १५३ ॥

एवं सेसं जहा चुलणीपियस्स निरवसेसं जाव सोहम्मे कप्पे अरुणकन्ते विमाणे उववन्ने । चत्तारि पलिओवमाइं ठिई । महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ ५ ॥ १५४ ॥

तब वह सुरादेव श्रमणोपासक चुलणीपिताके समान एकादश ही प्रतिज्ञाओंको कायासे आराधन करके उदार तपकर्म के द्वारा शुष्क हो गया यावत् कालके अवसरपर मृत्यु प्राप्त करके सौधर्म्म कल्पमें अरुणकन्त विमानमें देवता उत्पन्न हुआ जहां चार पल्योपमकी स्थिति है (वहांसे सुरादेव आयु क्षय करके) महाविदेह क्षेत्रमें सिद्ध होगा ॥ १५४ ॥

॥ निक्खेवो ॥

(निक्षेपः)

सत्तमस्स अङ्गस्स उवासगदसाणं चउत्थं अज्झयणं समत्तं ॥

सप्तमाङ्ग उपासकदशाका चतुर्थ अध्ययन समाप्त हुआ ॥

पञ्चमं अज्झयणं ।

(पंचम अध्ययन ।)

॥ उक्खेवो पञ्चमस्स ॥

(पंचम अध्ययनका उत्क्षेप)

एवं खलु, जम्बू, तेणं कालेणं तेणं समएणं आलभिया नामं नयरी । सङ्खवणे उज्जाणे । जियसत्तू राया । चुल्लसयए गाहावई अड्ढे जाव छ हिरण्णकोडीओ जाव छ वया दसगोसाहस्सिएणं वएणं । बहुला भारिया । सामी समोसढे । जहा आणन्दो तहा गिहिधम्मं पडिवज्जइ । सेसं जहा कामदेवो जाव धम्मपण्णत्तिं उवसम्पज्जित्ताणं विहरइ ॥ १५५ ॥

(सुधर्म्मा स्वामीजी बोले) हे जम्बू ! उसकाल, उससमय आलभिका नामा नगरी थी । उसमें शङ्खवन उद्यान था वहां जितशत्रु राजा अनुशासन भोगता था । उस नगरीमें अतुल्य ऋद्धियुक्त चुल्लशतक नामक गाथापति रहता था उसके पास ६ करोड़ स्वर्ण मुद्रा यावत् ६ वर्ग, (दश सहस्र गायका एक वर्ग) थे । उसकी बहुला नामा भार्या थी । स्वामीजी वहां पधारे । आनन्दके सदृश उसी प्रकार चुल्लशतकने गृहस्थधर्मको अङ्गीकार किया और शेष कामदेवके समान यावत् गृहीत धर्मको पालता हुआ रहने लगा ॥ १५५ ॥

तए णं तस्स चुल्लसयगस्स समणोवासयस्स पुव्वरत्तावरत्त कालसमयंसि एगे देवे अन्तियं जाव असिं गहाय एवं वयासी। "हं भो, चुल्लसयगा समणोवासया, जाव न भञ्जसि, तो ते अज्ज जेट्ठं पुत्तं साओ गिहाओ नीणेमि," एवं जहा चुलणीपियं, नवरं एक्केक्के सत्त मंससोल्लया, जाव कणीयसं जाव आयञ्चामि ॥ १५६ ॥

तब उस चुल्लशत्तक श्रमणोपासकके पास अर्धरात्रिके समय एक देवता यावत् तलवारको ग्रहण करके ऐसे बोला। हे चुल्लशत्तक श्रमणोपासक ! यदि तूं यावत् धर्म को भंग न करेगा तो मैं आज तेरे ज्येष्ठ पुत्रको तेरे गृहसे निकालूंगा फिर उस को वध करके यावत् दग्ध करके मांस और रुधिर तेरे शरीरपर छिड़कूंगा (सर्व १२९—१३४ चूलणीपिताके समान कह सुनाया इतना विशेष कि यहां एक एक के सात भाग करनेका बिचार प्रगट किया) यावत् कनीयस पुत्रको यावत् दग्ध करके मांस और रुधिर सिञ्चन करूंगा ॥ १५६ ॥

तए णं से चल्लसयए समणोवासए जाव विहरइ ॥ १५७ ॥

तब वह चुल्लशतक श्रमणोपासक यावत् उसी प्रकार धर्ममें स्थिर रहा ॥ १५७ ॥

तए णं से देवे चुल्लसयगं समणोवासयं चउत्थं पि एवं वयासी। "हं भो चुल्लसयगा समणोवासया, जाव न भञ्जसि, तो ते अज्ज जाओ इमाओ छ हिरण्णकोडीओ निहाण पउत्ताओ, छ वड्ढि पउत्ताओ छ पवित्थर पउत्ताओ, ताओ साओ गिहाओ नीणेमि २ त्ता आलभियाए नयरीए सिङ्घाडग जाव पहेसु सव्वओ समन्ता विप्पइरामि, जहा णं तुमं अट्टदुहट्ट-वसट्टे अकाले चेव जीवियाओ ववरोविज्जसि" ॥१५८॥

तब वह देवता चुल्लशतक श्रमणोपासकको ऐसे बोला। "हे चुल्लशतक श्रमणोपासक! यदि तूं यावत् शीलादिको भंग न करेगा तो मैं आज तेरी छ करोड़ स्वर्ण मुद्रा निधान प्रयुक्त, छ करोड़ स्वर्ण मुद्रा वृद्धि प्रयुक्त, और ६ करोड़ प्रविस्तर प्रयुक्त को तेरे गृहसे निकालूंगा, ऐसा करके आलभिका नगरीमें शृङ्गाटक यावत् पथोंपर सर्व धनको बिखेर दूंगा, जिस कारण तू आर्त्त और दुःखोंके वश होकर अनुचित समयपर जीवन त्याग देगा" ॥ १५८ ॥

तए णं से चुल्लसयए समणोवासए तेणं देवेणं

एवं वुत्ते समाणे अभीए जाव विहरइ ॥ १५९ ॥

तब वह चुल्लशतक श्रमणोपासक उस देवतासे ऐसा कहे जानेपर अभीत यावत् धर्ममें स्थिर रहा ॥ १५९ ॥

तए णं से देवे चुल्लसयगं समणोवासयं अभीयं जाव पासित्ता दोच्चं पि तच्चं पि तहेव भणइ जाव "ववरोविज्जसि" ॥ १६० ॥

तब उस देवताने चुल्लशतक श्रमणोपासकको भयरहित यावत् देखकर दो तीनवार उसी प्रकार कहा यावत् "जीवन त्याग देगा" ॥ १६० ॥

तए णं तस्स चुल्लसयगस्स समणोवासयस्स तेणं देवेणं दोच्चं पि तच्चं पि एवं वुत्तस्स समाणस्स अयमेयारूवे अज्झत्थिए ४ । " अहो णं इमे पुरिसे अणारिए जहा चुलणीपिया तहा चिन्तेइ जाव कणीयसं जाव आयञ्चइ, जाओ वि य णं इमाओ ममं छ हिरण्णकोडीओ निहाण पउत्ताओ छ वड्ढिपउत्ताओ छ पवित्थर पउत्ताओ, ताओ वि य णं इच्छइ ममं साओ गिहाओ नीणेत्ता, आलभियाए नयरीए सिङ्घाडग जाव विप्पइरित्तए, तं सेयं खलु ममं एयं

पुरिसं गिरिणहत्तए” त्ति कट्टु उट्ठाइए । जहा सुरादेवो । तहेव भारिया पुच्छइ, तहेव कहेइ ॥ १६१ ॥

तब उस चुल्लशतक श्रमणोपासकको उस देवतासे दो तीन वार ऐसा कहे जानेपर इस स्वरूपमें अध्यास्थित संकल्प उत्पन्न हुआ । “अहो, इस अनार्य्य पुरुषने (चुलणीपिताके समान उसी प्रकार विचार किया) यावत् मेरे तीनों पुत्रोंके मांस तथा रुधिरको मेरे शरीरपर सिञ्चन किया है और अब ६ करोड़ स्वर्ण मुद्रा निधान प्रयुक्त, ६ करोड़ वृद्धि प्रयुक्त, ६ करोड़ प्रविस्तर प्रयुक्त मेरे धनको मेरे गृहसे ले जाकर आलभिका नगरीमें शृङ्गाटक (—चतुष्पथ—चौराहा) यावत् पथोंपर बिखेरनेकी इच्छा करता है इस कारण श्रेष्ठ हो यदि मैं इस पुरुषको पकड़ूं ऐसा विचार कर वह उठा । देवता आकाशमें चला गया और उसके हाथमें स्तम्भ आगया इस कारण उसने कोलाहल किया सुरादेवके समान भार्याके पूछनेपर चुल्लशतकने उसी तरह सर्व वार्त्ता कह सुनाई यावत् भार्याने दण्ड ग्रहण करने की शिक्षा दी ॥ १६१ ॥

सेसं जहा चुलणीपियस्स जाव सोहम्मे कप्पे अरुणसिट्ठे विमाणे उववन्ने । चत्तारि पलिओवमाइं ठिई । सेसं तहेव जाव महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ ॥ १६२ ॥

(शेष चुलणीपिताके समान १४२–१४४ यावत्) सौधर्मकल्पमें अरुणसिद्ध विमानमें (देवता) उत्पन्न हुआ । (जहां) चारपल्योपमकी स्थिति है। (शेष तथैव यावत्) महाविदेह क्षेत्रमें सिद्ध होगा ॥ १६२ ॥

॥ निक्खेवो ॥

॥ निक्षेपः ॥

सत्तमस्स अंगस्स उवासगदसाणं पञ्चमं अज्झयणं समत्तं ॥

सप्तम अङ्ग उपासकदशाका पञ्चम अध्ययन समाप्त हुआ ॥

छट्ठं अज्झयणं ।

॥ षष्ठ अध्ययन ॥

॥ छट्ठस्स उक्खेवओ ॥

॥ षष्ठ अध्ययन का उत्क्षेप ॥

एवं खलु, जम्बू, तेणं कालेणं तेणं समएणं कम्पिल्लपुरे नयरे । सहस्सम्बवणे उज्जाणे । जियसत्तू राया । कुण्डकोलिए गाहावई । पूसा भारिया । छ हिरण्णकोडीओ निहाणपउत्ताओ छ वड्ढिपउत्ताओ छ पवित्थर पउत्ताओ छ वया दसगोसाहस्सिएणं वए-

णं । सामी समोसढे । जहा कामदेवो तहा सावं-
यधम्मं पडिवज्जइ । सच्चेव वत्तव्वया जाव पडिलाभे-
माणे विहरइ ॥ १६३ ॥

(सुधर्म्मास्वामीजी बोले) हे जम्बू! उस काल, उस समय
काम्पिल्यपुर एक नगर था । सहस्राम्रवन उद्यान था । वहां का
जितशत्रु राजा था । और कुण्डकोलिक गाथापति रहता था ।
पुष्या नामा उसकी भार्या थी उसके पास ६ करोड़स्वर्णमुद्रा
निधानप्रयुक्त ६ वृद्धिप्रयुक्त, ६ प्रविस्तरप्रयुक्त और ६ वर्ग,
(दशसहस्रगायका एक वर्ग) थे । स्वामीजी पधारे । कामदेवके
सदृश् उसी प्रकार कुण्डको लिकने श्रावकधर्म्म को अंगीकार
किया । (शेषसर्व उसी प्रकार कहना चाहिये निर्ग्रन्थियोंको
अन्नपानादि प्रदान करताहुआ यावत्) अपना कल्याण कर-
ताहुआ रहने लगा ॥ १६३ ॥

तएणं से कुण्डकोलिए समणोवासए अन्नया क-
याइ पुव्वावरण्हकालसमयंसि जेणेव असोगवणिया,
जेणेव पुढविसिलापट्टए, तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता
नाममुद्दगं च उत्तरिज्जगं च पुढविसिलापट्टए ठवेइ,
२ त्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तियं धम्म-
पण्णत्तिं उवसम्पज्जित्ताणं विहरइ ॥ १६४ ॥

तब वह कुण्डकोलिक श्रमणोपासक अन्यदा समय मध्यान्ह (=दोपहर) समयमें, जहां अशोकबन था और जहां पृथ्वीशिलापट्टक था वहां जाकर नामाङ्कित मुद्रा और उत्तरीय (=दुपट्टा) को पृथ्वीशिलापट्टकपर रखकरके, श्रमण भगवान् महावीरजीके पास ग्रहण किये हुये धर्म्मको पालता हुआ रहने लगा ॥ १६४ ॥

तएणं तस्स कुण्डकोलियस्स समणोवासयस्स एगे देवे अन्तियं पाउब्भवित्था ॥ १६५ ॥

तब उस कुण्डकोलिक श्रमणोपासक के पास एक देवता प्रकट हुआ ॥ १६५ ॥

तएणं से देवे नाममुद्दं च उत्तरिज्जं च पुढविसिलापट्टयाओ गेण्हइ, २ त्ता सखिङ्खिणिं अन्तलिक्खपडिवन्ने कुण्डकोलियं समणोवासयं एवं वयासी । "हं भो कुण्डकोलिया समणोवासया, सुन्दरीणं, देवाणुप्पिया, गोसालस्स मङ्खलिपुत्तस्स धम्मपण्णत्ती, नत्थि उट्ठाणे इ वा कम्मे इ वा बले इ वा वीरिए इ वा पुरिसक्कार परक्कमे इ वा नियया सव्वभावा, मंगुलीणं समणस्स भगवओ महावीरस्स धम्मपण्णत्ती,

अत्थि उट्ठाणे इ वा जाव परक्कमे इ वा, अणियया सव्वभावा" ॥ १६६ ॥

तब उस देवताने पृथ्वीशिलापट्टकपरसे नामाङ्कितमुद्रा वा उत्तरीयको उठाकर, छोटी घण्टिकाकी ध्वनिके साथ आकाश में जाकर कुण्डकोलिक श्रमणोपासक को ऐसे कहा। हे कुण्डकोलिक श्रमणोपासक! हे देवानुप्रिय! गोशाल मङ्खलिपुत्रका धर्म परम सुन्दर है (जिसमें) उत्थान, कर्म्म, बल, वीर्य्य, पुरुषात्कार, पराक्रम नहीं हैं और सर्वभाव नियत हैं; श्रमण भगवान् महावीरजीका धर्म खोटा अर्थात् अहित है क्योंकि इसमें उत्थान, यावत् पराक्रम है, और सर्व भाव अनियत हैं" ॥ १६६ ॥

तएणं से कुण्डकोलिए समणोवासए तं देवं एवं वयासी। "जइ णं, देवा, सुन्दरी गोसालस्स मङ्खलिपुत्तस्स धम्मपण्णत्ती, नत्थि उट्ठाणे इ वा जाव नियया सव्वभावा, मंगुलीणं समणस्स भगवओ महावीरस्स धम्मपण्णत्ती, अत्थि उट्ठाणे इ वा जाव अणियया सव्वभावा। तुमे णं, देवा, इमा एयारूवा दिव्वा देविड्ढी, दिव्वा देवज्जुई, दिव्वे देवाणुभावे किणा लद्धे किणा पत्ते किणा अभिसमन्नागए, किं उट्ठा-

णेणं जाव पुरिसक्कारपरक्कमेणं, उदाहु अणुट्ठाणेणं अकम्मेणं जाव अपुरिसक्कारपरक्कमेणं" ? ॥ १६७ ॥

तब वह कुण्डकोलिक श्रमणोपासक उस देवताको ऐसे बोला। हे देव! यदि गोशाल मङ्खलिपुत्रका धर्म्म सुन्दर है और उसमें उत्थान नहीं है यावत् सर्वभाव नियत हैं और श्रमण भगवान् महावीरजीका धर्म अमङ्गलीक है अपरञ्च उसमें उत्थान है यावत् सर्वभाव अनियत हैं तो तुमने, हे देव! ऐसा स्वरूप दिव्य ऋद्धि, दिव्य द्युति, दिव्यदेवानुभाव किस प्रकारसे लब्ध प्राप्त वा सम्प्राप्त किये है, क्या यह पदार्थ उत्थान यावत् पुरुषात्कार पराक्रम से प्राप्तकिये हैं या उलटा अनुष्ठान अकर्म यावत् अपुरुषात्कार अबलसे प्राप्त किये हैं ?" ॥ १६७ ॥

तएणं से देवे कुण्डकोलियं समणोवासयं एवं वयासी। "एवं खलु, देवाणुप्पिया, मए इमेयारूवा दिव्वा देविड्ढी ३ अणुट्ठाणेणं जाव अपुरिसक्कारपरक्कमेणं लद्धा पत्ता अभिसमन्नागया" ॥ १६८ ॥

तब वह देवता कुण्डकोलिक श्रमणोपासकको ऐसे बोला। "हे देवानुप्रिय! मैंने ऐसा स्वरूप दिव्य देवर्द्धि (इत्यादि) अनुष्ठानसे यावत् अपुरुषात्कार और अवल से लब्ध प्राप्त अथवा सम्प्राप्त किये हैं" ॥ १६८ ॥

तएणं से कुण्डकोलिए समणोवासए तं देवं एवं वयासी। "जइणं, देवा, तुमे इमा एयारूवा दिव्वा देविड्ढी ३ अणुट्ठाणेणं जाव अपुरिसक्कारपरक्कमेणं लद्धा पत्ता अभिसमन्नागया, जेसि णं जीवाणं नत्थि उट्ठाणे इ वा जाव परक्कमे इ वा, ते किं न देवा ?। अहणं, देवा, तुमे इमा एयारूवा दिव्वा देविड्ढी ३ उट्ठाणेणं जाव परक्कमेणं लद्धा पत्ता अभिसमन्नागया। तो जं वदसि सुन्दरीणं गोसालस्स मङ्खलिपुत्तस्स धम्मपण्णत्ती, नत्थि उट्ठाणे इ वा जाव नियया सव्वभावा, मङ्गुलीणं समणस्स भगवओ महावीरस्स धम्मपण्णत्ती, अत्थि उट्ठाणे इ वा जाव अणियया सव्वभावा, तं ते मिच्छा" ॥ १६९ ॥

तब वह कुण्डकोलिक श्रमणोपासक उस देवताको ऐसे बोला। "हे देव ! यदि तुमने यह ऐसा स्वरूप दिव्य देवऋद्धि (इत्यादि) अनुष्ठान यावत् अपुरुषात्कार, अबलसे प्राप्त लब्ध वा सम्प्राप्त की हैं, तो जिन जीवोंमें उत्थान यावत् पराक्रम (शक्तियां) नहीं है। तो वह देवता क्यूं नहीं बने हैं ?। इसकारण, हे देव ! तूने ऐसा स्वरूप, दिव्य देवर्द्धि इत्यादि उत्थान (यावत्) पराक्रमसेही लब्ध प्राप्त अथवा सम्प्राप्त

किये हैं। इसलिये जो तू कहता है कि गोशाल मङ्खलिपुत्रका धर्म सुन्दर है जिसमें उत्थान नहीं है यावत् सर्वभाव नियत हैं, और श्रमण भगवान् महावीरजीका धर्म्म अर्थात् उपदेश हानिकारक है और उसमें उत्थान है यावत् सर्व भाव अनियत है, यह तेरा ऐसा कथन मिथ्या है" ॥ १६९ ॥

तएणं से देवे कुण्डकोलिएणं समणोवासएणं एवं वुत्ते समाणे सङ्किए जाव कलुससमावन्ने नो संचाएइ कुण्डकोलियस्स समणोवासयस्स किंचि पामोक्खमाइक्खित्तए, नाममुद्दयं च उत्तरिज्जयं च पुढविसिलापट्टए ठवेइ, २ त्ता जामेव दिसं पाउब्भूए, तामेव दिसं पडिगए ॥ १७० ॥

तब उस देवताने कुण्डकोलिक श्रमणोपासकसे इसप्रकार कहे जानेपर शङ्कित होकर (यावत्) पीड़ित होकर और कुण्डकोलिक श्रमणोपासककी युक्तियोंका खण्डन करनेके अपने आपको असमर्थ जानकर, नाममुद्रा और उत्तरीयको पृथ्वीशिलापट्टकपर रखदिया, ऐसा करके वह जिस दिशासे प्रकट हुआ था उस दिशाको चला गया ॥ १७० ॥

ते णं कालेणं तेणं समएणं सामी समोसढे ॥१७१॥

उस काल, उस समय स्वामी जी काम्पिल्यपुरमें पधारे ॥ १७१ ॥

तएणं से कुण्डकोलिए समणोवासए इमीसे कहाए लद्धट्ठे हट्ठ जहा कामदेवो तहा निग्गच्छइ जाव पज्जुवासइ । धम्मकहा ॥ १७२ ॥

तब वह कुण्डकोलिक श्रमणोपासक यह समाचार पाकर मनमें बड़ा प्रसन्न वा सन्तुष्ट हुआ और कामदेवके समान उसी प्रकार दर्शनार्थ गया यावत् सेवाभक्ति की । और धर्म्मकथा श्रवण की ॥ १७२ ॥

" कुण्डकोलिया " इ समणे भगवं महावीरे कुण्डकोलियं समणोवासयं एवं वयासी । "से नूणं, कुण्डकोलिया, कल्लं तुब्भ पुव्वावरण्हकाल समयंसि असोगवणियाए एगे देवे अन्तियं पाउब्भवित्था । तएणं से देवे नाममुद्दं च तहेव जाव पडिगए । से नूणं, कुण्डकोलिया, अट्ठे समट्ठे" ? ।

" हन्ता, अत्थि " ।

" तं धन्ने सि णं तुमं, कुण्डकोलिया," जहा कामदेवो ॥ १७३ ॥

(कुण्डकोलिक की तरफ दृष्टिकरके) श्रमण भगवान् महावीरजी कुण्डकोलिक श्रमणोपासकको ऐसे बोले । हे कुण्डकोलिक ! " क्या कल तेरे पास मध्यान्हसमय कोई देवता

अशोकवनमें प्रगट हुआ था। तब वह देवता नामाङ्कितमुद्रा और उत्तरीयको उठाकर बोला (तथैव १६६–१७० तक कहा) यावत् चला गया। हे कुण्डकोलिक! क्या यह बात सत्य है?"

(कुण्डकोलिकने उत्तर दिया) "महाराज! सत्य है"

(महावीरजी बोले) हे कुण्डकोलिक! "तुम धन्य हो," (कामदेवके समान सब कहा)॥ १७३॥

"अज्जो" इ समणे भगवं महावीरे समणे निग्गन्थे य निग्गन्थीओ य आमन्तित्ता एवं वयासी। "जइ ताव, अज्जो, गिहिणो गिहिमज्झा वसन्ताणं अन्नउत्थिए अट्ठेहि य हेऊहि य पसिणेहि य कारणेहि य वागरणेहि य निप्पट्ठपसिणवागरणे करेन्ति, सक्का पुणाइं, अज्जो, समणेहिं निग्गन्थेहिं दुवालसङ्गं गणिपिडगं अहिज्जमाणेहिं अन्नउत्थिया अट्ठेहि य जाव निप्पट्ठपसिणा करित्तए॥ १७४॥

श्रमण भगवान् महावीरजी साधु वा साध्वियोंको आमन्त्रित करके ऐसे बोले। "हे आर्य्यपुरुषो! यदि गृहके मध्यमें रहते हुये गृहस्थी पुरुष अन्य यूथिकको अर्थ, हेतु, प्रश्न, कारण वा व्याकरणसे निरुत्तर कर देते हैं, तो फिर, हे आर्य्यमहाशयो! श्रमणों, निर्ग्रन्थियों वा द्वादशाङ्गके पाठियोंको

अवश्यमेव अन्ययूथिकको अर्थसे यावत् निरुत्तर करदेना उचित है ॥ १७४ ॥

तएणं समणा निग्गन्था य निग्गन्थीओ य समणस्स भगवओ महावीरस्स "तह" त्ति एयमट्ठं विणएणं पडिसुणेन्ति ॥ १७५ ॥

तब श्रमण, नैर्ग्रन्थ वा साध्वियोंने श्रमण भगवान् महावीरजी की "तथास्तु" ऐसा बचन उच्चारणकरके इस वार्ताको विनय से श्रवण किया ॥ १७५ ॥

तएणं से कुण्डकोलिए समणोवासए समणं भगवं महावीरं वन्दइ नमंसइ, २ त्ता पसिणाइं पुच्छइ, २ त्ता अट्ठमादियइ, २ त्ता जामेव दिसं पाउब्भूए, तामेव दिसं पडिगए ॥ १७६ ॥

तब वह कुण्डकोलिक श्रमणोपासक श्रमण भगवान् महावीरजीको वन्दना नमस्कार करके, प्रश्न पूछकर और उत्तर ग्रहण करके जिस दिशासे प्रकट हुआ था, उसी दिशाको चला गया ॥ १७६ ॥

सामी बहिया जणवयविहारं विहरइ ॥ १७७ ॥

तब स्वामीजी बाहर अन्यदेशको विहार करगये ॥ १७७ ॥

तएणं तस्स कुण्डकोलियस्स समणोवासयस्स बहूहिं सील जाव भावेमाणस्स चोद्दस संवच्छराइं वइक्कन्ताइं। पण्णरसमस्स संवच्छरस्स अन्तरावट्ट-माणस्स अन्नया कयाइ जहा कामदेवो तहा जेट्ठ पुत्तं ठवेत्ता तहा पोसहसालाए जाव धम्मपण्णत्तिं उवस-म्पजित्ताणं विहरइ। एवं एक्कारस उवासगपडिमा-ओ ॥ १७८ ॥

तब उस कुण्डकोलिक श्रमणोपासकको बहुत शीलसे (यावत्) अपना कल्याण करते हुये १४ वर्ष व्यतीत हो गये। पंचदश् वर्षके मध्यमें अन्यदा समय अध्यास्थित संकल्प उत्पन्न हुआ जिसके अनुसार वह कामदेवके समान ज्येष्ठ पुत्रको गृहमें स्थापित करके पोषधशालामें (यावत्) गृहीतधर्मको पालता हुआ रहनेलगा। और उसने सम्यक्प्रकारसे एकादश् उपासकप्रतिमाओं (प्रतिज्ञाओं) को पाला ॥ १७८ ॥

तहेव जाव सोहम्मे कप्पे अरुणज्झए विमाणे जाव अन्तं काहिइ ॥ १७९ ॥

(उसी प्रकार यावत्) सौधर्मकल्पमें अरुणध्वज विमानमें देवता उत्पन्न हुआ यावत् मार्ग अर्थात् गतिका अन्त करेगा अर्थात् सिद्ध होगा ॥ १७९ ॥

॥ निक्खेवो ॥

॥ निक्षेपः ॥

सत्तमस्स अङ्गस्स उवासगदसाणं छट्ठं अज्झयणं समत्तं ॥

सप्तम अंग उपासकदशाका षष्ठ अध्ययन समाप्त हुआ ॥

सत्तमं अज्झयणं

सप्तम अध्ययन

॥ सत्तमस्स उक्खेवो ॥

सप्तम अध्ययनका उत्क्षेप ॥

पोलासपुरे नामं नयरे । सहस्सम्बवणे उज्जाणे । जियसत्तू राया ॥ १८० ॥

उसकाल, उससमय पोलासपुर नामक एक नगर था । उसके पास सहस्राम्रवन था । वहां जितशत्रु राजा राज्य करता था ॥ १८० ॥

तत्थणं पोलासपुरे नयरे सद्दालपुत्ते नामं कुम्भकारे आजीविओवासए परिवसइ । आजीवियसमयंसि लद्धट्ठे गहियट्ठे पुच्छियट्ठे विणिच्छियट्ठे अभिगयट्ठे अट्ठिमिंजपेमाणुरागरत्ते य "अयमाउसो

आजीवियसमए अट्ठे अयं परमट्ठे सेसे अणट्ठे" त्ति आजीवियसमएणं अप्पाणं भावेमाणे विहरइ ॥१८१॥

उस पोलासपुर नगरमें शब्दालपुत्र नामक कुंभकार (कुम्हार) गोशालाजीके मतका उपासक वसता था जिसने आजीविकामतके सिद्धान्तके अर्थ लब्ध किये थे और ग्रहण किये थे पूच्छ २ कर निर्णय किये थे और अर्थ उसके अवगत थे उसकी अस्थि और मिंजियां प्रेमराग से रंगी हुई थीं और वह सदाकाल आजीविकामतको परमार्थ समझता हुआ शेष कार्योंको अनर्थ रूप मानता था और गोशालाजीके सिद्धान्तको अंगीकार करता हुआ विचरता था ॥ १८१ ॥

तस्स णं सद्दालपुत्तस्स आजीविओवासगस्स एक्का हिरण्णकोडी निहाणपउत्ता एक्का वड्ढिपउत्ता एक्का पवित्थरपउत्ता एक्के वए दसगोसाहस्सिएणं वए-णं ॥ १८२ ॥

उस शब्दालपुत्र आजीविकोपासक के पास एक करोड़ स्वर्णमुद्रा निधानप्रयुक्त, एक करोड़ वृद्धिप्रयुक्त, एक करोड़ प्रविस्तर प्रयुक्त और दशसहस्र गोका एक वर्ग था ॥ १८२ ॥

तस्स णं सद्दालपुत्तस्स आजीविओवासगस्स अग्गिमित्ता नामं भारिया होत्था ॥ १८३ ॥

उस शब्दालपुत्र आजीविकोपासककी अग्निमित्रा नामा भार्या थी ॥ १८३ ॥

तस्स णं सद्दालपुत्तस्स आजीविओवासगस्स पोलासपुरस्स नगरस्स बहिया पञ्च कुम्भकारावणसया होत्था। तत्थ णं बहवे पुरिसा दिण्णभइभत्तवेयणा कल्लाकल्लिं बहवे करए य वारए य पिहडए य घडए य अद्धघडए य कलसए य अलिञ्जरए य जम्बूलए य उट्टियाओ य करेन्ति, अन्ने य से बहवे पुरिसा दिण्णभइभत्तवेयणा कल्लाकल्लिं तेहिं बहूहिं करएहि य जाव उट्टियाहि य रायमग्गंसि वित्तिं कप्पेमाणा विहरन्ति ॥ १८४ ॥

उस शब्दालपुत्र आजीविकोपासककी पोलासपुर नगरके बाहिर पांच कुम्भकारपण्यशालाएं थीं। उनमें बहुत पुरुष विभक्त अन्न (=बांटा हुआ भोजन) और दत्त भृति (=दिया हुआ मासिक या वार्षिक वेतन) से प्रति दिन बहुत करक, वारक, पिठर, घटक, अर्द्धघटक, कलश, उदकभाजन, जम्बूलक और चषक (=शराब पात्र) बनाते थे, और अन्य बहुत पुरुष विभक्तभृति और दत्त भोजन पर प्रतिप्रभात उन बहुत

करक यावत् चषकोंको राजमार्गपर आजीविकाके अर्थ विक्रय करनेको जाते थे ॥ १८४ ॥

तएणं से सद्दालपुत्ते आजीविओवासए अन्नया कयाइ पुव्वावरण्हकालसमयंसि जेणेव असोगवणिया तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता गोसालस्स मङ्खलिपुत्तस्स अन्तियं धम्मपण्णत्तिं उवसम्पज्जित्ताणं विहरइ ॥ १८५ ॥

तब वह शब्दालपुत्र आजीविकोपासक अन्यदा मध्यान्ह समय जहां अशोकबन था वहां गया, ऐसा करके गोशाल मङ्खलिपुत्रसे ग्रहण किये हुये धर्म्मको पालन करता हुआ रहने लगा ॥ १८५ ॥

तएणं तस्स सद्दालपुत्तस्स आजीविओवासगस्स एगे देवे अन्तियं पाउब्भवित्था ॥ १८६ ॥

तब उस शब्दालपुत्र आजीविकोपासकके पास एक देवता प्रगट हुआ ॥ १८६ ॥

तएणं से देवे अन्तलिक्खपडिवन्ने सखिङ्खिणियाइं जाव परिहिए सद्दालपुत्तं आजीविओवासयं एवं वयासी । "एहिइ णं, देवाणुप्पिया, कल्लं इहं महामाहणे उप्पन्नणाणदंसणधरे तीयपडुप्पन्नमणा-

गय जाणए अरहा जिणे केवली सव्वणू सव्वदरिसी तेलोक्कवहियमहियपूइए सदेवमणुयासुरस्स लोगस्स अच्चणिज्जे वन्दणिज्जे सक्कारणिज्जे सम्माणणिज्जे कल्लाणं मङ्गलं देवयं चेइयं जाव पज्जुवासणिज्जे तच्चकम्मसम्पयासम्पउत्ते । तं णं तुमं वन्देज्जाहि जाव पज्जुवासेज्जाहि, पाडिहारिएणं पीढ फलग सिज्जासंथारएणं उवनिमन्तेज्जाहि" ॥ दोच्चं पि तच्चं पि एवं वयइ, २ त्ता जामेव दिसं पाउब्भूए तामेव दिसं पडिगए ॥ १८७ ॥

तब वह देवता आकाशमें स्थित होकर छोटी घण्टियों की ध्वनिके मध्यमें यावत् शब्दालपुत्र आजीविकोपासकको ऐसे बोला । हे देवानुप्रिय ! कल यहां एक दयावान् महान् पुरुष आवेंगे जिनको ज्ञानदर्शन उत्पन्न हुआ २ है, जो वर्त्तमान, गत और भविष्यत् कालके ज्ञातकहैं ऐसे अर्हन् देव, जिन, केवली, सर्वज्ञ, सर्वदर्शी त्रैलोक्यके पुरुषोंके प्रति पूजा और अर्चा योग्य हैं, अपरंच जो कल्याण, मङ्गल, धर्माध्यापक और ज्ञानवान् होनेके कारण देव, मनुष्य असुरलोगोंको अर्चनीय, बन्दनीय, सत्कारणीय, सन्माननीय (यावत्) और सेवा भक्तिके योग्य हैं और जो तथ्य अर्थात्

प्रतिफलदायक कर्म स्मृद्धिसे युक्त हैं। इसलिये तूने वन्दना यावत् सेवा भक्ति करना और नम्रभावसे आसन, फलक, शय्या और संस्तारक के लिये आमन्त्रण देना" ॥ दो तीनवार ऐसे कहकर वह देवता जिस दिशासे प्रगट हुआ था उसी दिशाको चला गया ॥ १८७ ॥

तएणं तस्स सद्दालपुत्तस्स आजीविओवासगस्स तेणं देवेणं एवं वुत्तस्स समाणस्स इमेयारूवे अज्झत्थिए ४ समुप्पन्ने । "एवं खलु ममं धम्मायरिए धम्मोवएसए गोसाले मङ्खलिपुत्ते, से णं महामाहणे उप्पन्नणाण दंसणधरे जाव तच्च कम्मसम्पयासम्पउत्ते, से णं कल्लं इहं हव्वमागच्छिस्सइ । तएणं तं अहं वन्दिस्सामि जाव पज्जुवासिस्सामि पाडिहारिएणं जाव उवनिमन्तिस्सामि" ॥ १८८ ॥

तब उस देवतासे इसप्रकार कहे जानेपर उस शब्दालपुत्र आजीविकोपासकके मनमें अध्यास्थित संकल्प उत्पन्न हुआ ॥ "निश्चयसे मेरे धर्माचार्य्य, धर्मोपदेशक गोशाल मङ्खलिपुत्रही हैं, वह ही दयावान् और महान् हैं अथवा उनको ज्ञान दर्शन उत्पन्न हुआ २ है, यावत् वह ही तथ्य कर्मस्मृद्धिसे युक्त हैं, वह कल यहां पधारेंगे। इसलिये मैं स्तुति

यावत् सेवाभक्ति करूंगा और दयाभावसे यावत् आमन्त्रित करूंगा" ॥ १८८ ॥

तएणं कल्लं जाव जलन्ते समणे भगवं महावीरे जाव समोसरिए । परिसा निग्गया जाव पज्जुवासइ ॥ १८९ ॥

तब दूसरे दिन यावत् सूर्य्योदय के पश्चात् श्रमण भगवान् महावीरजी (यावत्) पधारे, पुरुष (दर्शनार्थ) गये यावत् सेवाभक्ति की ॥ १८९ ॥

तएणं से सद्दालपुत्ते आजीविओवासए इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे, "एवं खलु समणे भगवं महावीरे जाव विहरइ, तं गच्छामि णं समणं भगवं महावीरं वन्दामि जाव पज्जुवासामि," एवं सम्पेहेइ, २ त्ता ण्हाए जाव पायच्छित्ते सुद्धप्पावेसाइं जाव अप्प महग्घाभरणालङ्किय सरीरे मणुस्सवग्गुरापरिगए साओ गिहाओ पडिणिक्खमइ, २ त्ता पोलासपुरं नयरं मज्झं मज्झेणं निग्गच्छइ, २ त्ता जेणेव सहस्सम्बवणे उज्जाणे जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता तिक्खुत्तो आया-

हिणं पयाहिणं करेइ, २ त्ता वन्दइ नमंसइ, २ त्ता जाव पज्जुवासइ ॥ १९० ॥

तब उस शब्दलपुत्र आजीविकोपासकने ऐसा समाचार प्राप्त करके इस प्रकार मनमें विचार किया। "निश्चयसे श्रमण भगवान् महावीरजी यावत् यहां विचरते हैं, इसकारण मैं जाता हूं और श्रमण भगवान् महावीरजीको वन्दना यावत् सेवा भक्ति करता हूं," ऐसा विचार कर, स्नान यावत् प्रायश्चित्त करके शुद्ध वस्त्र पहनकर (यावत्) अल्प और महंगे आभरण शरीरपर आलंकृत करके मनुष्यवर्गसे घिरा हुआ (शब्दालपुत्र) अपने गृहसे निकला, ऐसा करके पोलासपुर नगरके मध्यसे जाकर जहां सहस्राम्रवन था, और श्रमण भगवान् महावीरजी थे, वहां गया, ऐसा करके उसने तीन वार वाईं तरफसे दक्षिणतक प्रदक्षिणा करके, और वन्दना नमस्कार करके यावत् सेवा भक्ति की ॥ १९० ॥

तए णं समणे भगवं महावीरे सद्दालपुत्तस्स आजीविओवासगस्स तीसे य महइ जाव धम्म कहा समत्ता ॥ १९१ ॥

तब श्रमण भगवान् महावीरजीने शब्दालपुत्र आजीविकोपासक और अन्य महापुरुषोंके सामने (यावत्) धर्म्मकथा कही ॥ १९१ ॥

"सद्दालपुत्ता" इ समणे भगवं महावीरे सद्दालपुत्तं आजीविओवासयं एवं वयासी। "से नूणं, सद्दालपुत्ता, कल्लं तुमं पुव्वावरण्ह कालसमयंसि जेणेव असोगवणिया जाव विहरसि। तए णं तुब्भं एगे देवे पाउब्भवित्था। तएणं से देवे अन्तलिक्ख पडिवन्ने एवं वयासी। " "हं भो सद्दालपुत्ता," " तं चेव सव्वं जाव " "पज्जुवासिस्सामि" "। से नूणं, सद्दालपुत्ता, अट्ठे समट्ठे?" ॥

"हन्ता, अत्थि" ॥

" नो खलु, सद्दालपुत्ता, तेणं देवेणं गोसालं मंखलिपुत्तं पणिहाय एवं वुत्ते" ॥ १९२ ॥

श्रमण भगवान् महावीरजी शब्दालपुत्र आजीविकोपासकसे ऐसे बोले। हे शब्दालपुत्र! कल तूं मध्यान्हसमय जहां अशोकवन है वहां (यावत्) जब विचरता था तब तेरे पास एक देवता प्रगट हुआ था। तब वह देवता आकाशमें स्थित होकर ऐसे बोला। " " हे शब्दालपुत्र" " (शेष सर्व १८७-१८८ यावत्) " " मैं सेवा भक्ति करूंगा" "। हे शब्दालपुत्र! निश्चित क्या यह बात यथार्थ है (सद्दालपुत्र बोला) "सत्य अथवा यथार्थ है"

"(भगवानुवाच) हे शब्दालपुत्र! निश्चित उस देवताने गोशालमङ्खलिपुत्रके सम्बन्धमें ऐसा नहीं कहा था" ॥ १९२ ॥

तएणं तस्स सद्दालपुत्तस्स आजीविओवासयस्स समणेणं भगवया महावीरेणं एवं वुत्तस्स समाणस्स इमेयारूवे अज्झत्थिए ४। "एस णं समणे भगवं महावीरे महामाहणे उप्पन्नणाणदंसणधरे जाव तच्च कम्मसम्पया सम्पउत्ते। तं सेयं खलु ममं समणं भगवं महावीरं वन्दित्ता नमंसित्ता पाडिहारिएणं पीढ फलग जाव उवनिमन्तित्तए" एवं सम्पेहेइ, २ त्ता उट्ठाए उट्ठेइ, २ त्ता समणं भगवं महावीरं वन्दइ नमंसइ, २ त्ता एवं वयसी। "एवं खलु, भन्ते, ममं पोलासपुरस्स नयरस्स बहिया पञ्च कुम्भकारावणासया। तत्थणं तुब्भे पाडिहारियं पीढ जाव संथारयं ओगिण्हित्ताणं विहरइ" ॥ १९३ ॥

तब श्रमण भगवान् महावीरजीसे ऐसा कहे जानेपर उस शब्दालपुत्र आजीविकोपासकके मनमें इस स्वरूपमें अध्यास्थित संकल्प उत्पन्न हुआ। "यह श्रमण भगवान् महावीरजी महादयावान्, ज्ञानदर्शनधारक यावत् तथ्य कर्म सम्पत्तिसे युक्त हैं। इसकारण श्रेष्ठ हो यदि मैं श्रमण भगवान्

महावीरजीको बन्दना नमस्कार करके दयाभावसे आसन, फलक यावत् संस्तारकके लिये आमंत्रण दूं"। ऐसा विचार कर वह उठा और श्रमण भगवान् महावीरजीको बन्दना नमस्कार करके ऐसे बोला । हे भगवन्! पोलासपुर नगरके बाहिर मेरे कुम्भकारों की पांच निर्माणशालायें हैं। इसलिये आप कृपा करके आसन यावत् संस्तारक ग्रहण करके वहां ही ठहरें" ॥ १९३ ॥

तए णं समणे भगवं महावीरे सद्दालपुत्तस्स आजीविओवासगस्स एयमट्ठं पडिसुणेइ, २ त्ता सद्दालपुत्तस्स आजीविओवासगस्स पञ्चकुम्भकारावणसएसु फासुएसणिज्जं पाडिहारियं पीढफलग जाव संथारयं ओगिणिहत्ताणं विहरइ ॥ १९४ ॥

तब श्रवण भगवान् महावीरजी शब्दालपुत्र आजीविकोपासककी इस बातको स्वीकार करके शब्दालपुत्र आजीविकोपासककी पांच विरचनशालाओंमें प्राशुक, एषणीय तथा प्रातिहारिक आसन, फलक यावत् संस्तारकको ग्रहण करके वहांही ठहर गये ॥ १९४ ॥

तए णं से सद्दालपुत्ते आजीविओवासए अन्नया कयाइ वायाहययं कोलालभण्डं अन्तो सालाहिन्तो बहिया नीणेइ, २ त्ता आयवंसि दलयइ ॥ १९५ ॥

तब उस शब्दालपुत्र आजीविकोपासकने अन्यदा समय वायुसे शुष्क हुए २ भाजनोंको कारखानेसे बाहर निकाला, ऐसा करके रविताप (सूर्योत्ताप) में रखदिया ॥ १९५ ॥

तए णं समणे भगवं महावीरे सद्दालपुत्तं आजीविओवासयं एवं वयासी । "सद्दालपुत्ता, एस णं कोलालभण्डे कओ?" ॥ १९६ ॥

तब श्रमण भगवान् महावीरजी शब्दालपुत्र आजीविकोपासकको ऐसे बोले । "हे शब्दालपुत्र! यह भाजन कैसे बने हैं?" ॥ १९६ ॥

तए णं से सद्दालपुत्ते आजीविओवासए समणं भगवं महावीरं एवं वयासी । "एस णं, भन्ते, पुव्विं मट्टिया आसी, तओ पच्छा उदएणं निमिज्जइ, २ त्ता छारेण य करिसेण य एगयओ मीसिज्जइ, २ त्ता चक्के आरोहिज्जइ, तओ बहवे करगा य जाव उट्टियाओ य कज्जन्ति" ॥ १९७ ॥

तब वह शब्दालपुत्र आजीविकोपासक श्रमण भगवान् महावीरजीसे ऐसे बोला । "हे भगवन् ! पहले तो यह रेणु (मिट्टी) थी, उसके पश्चात् जलसे मिलाकर, क्षार और शुष्क गोमय (सूखा गोबर) से पुनः मिला करके चक्रपर

आरोहण कीजाती है, फिर बहुत करक यावत् उष्ट्रिका बनाये जाते हैं" ॥ १९७ ॥

तए णं समणे भगवं महावीरे सद्दालपुत्तं आजीविओवासयं एवं वयासी । "सद्दालपुत्ता, एस णं कोलालभण्डे किं उट्ठाणेणं जाव पुरिसक्कार परक्कमेणं कज्जन्ति, उदाहु अणुट्ठाणेणं जाव अपुरिसक्कारपरक्कमेणं कज्जन्ति?" ॥ १९८ ॥

तब श्रमण भगवान् महावीरजी शब्दालपुत्र आजीविकोपासकको ऐसे बोले । हे शब्दालपुत्र! यह भाजन क्या उत्थान यावत् पुरुषात्कार वा पराक्रमसे बनते हैं या विना उद्यम पौरुष यावत् पराक्रमकेही बन जाते हैं?" ॥ १९८ ॥

तए णं से सद्दालपुत्ते आजीविओवासए समणं भगवं महावीरं एवं वयासी । "भन्ते, अणुट्ठाणेणं जाव अपुरिसक्कारपरक्कमेणं, नत्थि उट्ठाणे इ वा जाव परक्कमे इ वा, नियया सव्व भावा" ॥ १९९ ॥

तब वह शब्दालपुत्र आजीविकोपासक श्रमण भगवान् महावीरजीको ऐसे बोला । "हे भगवन्! अनुष्ठान यावत् अपुरुषात्कार अपराक्रमसेही बनते हैं, उत्थान यावत् पराक्रम अनावश्यक हैं. क्योंकि सर्व भाव नियत हैं" ॥ १९९ ॥

तए णं समणे भगवं महावीरे सद्दालपुत्तं आजीविओवासयं एवं वयासी । "सद्दालपुत्ता, जइ णं तुब्भं केइ पुरिसे वायाहयं वा पक्केल्लयं वा कोलालभण्डं अवहरेज्जा वा विक्खिरेज्जा वा भिन्देज्जा वा अच्छिन्देज्जा वा परिट्ठवेज्जा वा अग्गिमित्ताए वा भारियाए सद्धिं विउलाइं भोगभोगाइं भुञ्जमाणे विहरेज्जा, तस्स णं तुमं पुरिसस्स किं दण्डं वत्तेज्जासि ?" ॥ "भन्ते, अहं णं तं पुरिसं आओसेज्जा वा हणेज्जा वा बन्धेज्जा वा महेज्जा वा तज्जेज्जा वा तालेज्जा वा निच्छोडेज्जा वा निब्भच्छेज्जा वा अकाले चेव जीवियाओ ववरोवेज्जा" ॥ "सद्दालपुत्ता, नो खलु तुब्भ केइ पुरिसे वायाहयं वा पक्केल्लयं वा कोलालभण्डं अवहरइ वा जाव परिट्ठवेइ वा अग्गिमित्ताए वा भारियाए सद्धिं विउलाइं भोगभोगाइं भुञ्जमाणे विहरइ । नो वा तुमं तं पुरिसं आओसेज्जसि वा हणेज्जसि वा जाव अकाले चेव जीवियाओ ववरोवेज्जसि । जइ नत्थि उट्ठाणे इ वा जाव परक्कमे इ वा, नियया सव्वभावा । अहं णं, तुब्भ केइ पुरिसे

वायाहयं जाव परिट्ठवेइ वा अग्गिमित्ताए वा जाव विहरइ, तुमं वा तं पुरिसं आओसेसि वा जाव ववरोवेसि। तो जं वदसि, नत्थि उट्ठाणे इ वा जाव नियया सव्वभावा, तं ते मिच्छा" ॥ २०० ॥

तब श्रमण भगवान् महावीरजी शब्दालपुत्र आजीविकोपासकको ऐसे बोले। "हे शब्दालपुत्र! यदि कोई मनुष्य तेरे वाताहत और पके हुए भाजनोंको चुरा ले, खण्डित, विक्षिप्त अथवा छिद्रित कर दे या बाहिर निकालकर अरक्षित कर दे और तेरी अग्निमित्राभार्याके साथ विपुल भोग भोगे, तो तू उसको क्या दण्ड देगा?" ॥ (शब्दालपुत्रने उत्तर दिया) "हे भगवन्! मैं उस पुरुषको शाप दूंगा, दण्ड (डंडा) आदिसे मारूंगा, तिरस्कार करूंगा तथा चपेटादिसे ताडन करूंगा अथवा उसका धन छीन लूंगा वा उसको परुष बचनोंसे झिड़कूंगा (इसके अतिरिक्त) असमय उसको जीवनसे विमुक्त करदूंगा ॥ (भगवान् बोले) "हे शब्दालपुत्र! कोई भी पुरुष तेरे वाताहत वा पक्व भाजनोंको ना ही चुराता है यावत् ना ही अरक्षित करता है और ना ही अग्निमित्राके साथ विपुल भोग भोगता है और तू भी उसको ना ही शाप देता है, ना ही मारता है यावत् ना ही जीवनसे विमुक्त करता है यदि उत्थान यावत् पराक्रम नहीं है और

सर्व भाव नियत हैं। मैं निश्चयसे कहता हूं कि यदि कोई पुरुष तेरे वाताहत यावत् भाजनोंको अरक्षित करता है वा अग्निमित्राके साथ विपुल भोग भोगता हुआ विचरता है और तू भी उसको अभिशाप देता है यावत् जीवनसे विमुक्त करता है तो जो तू कहता है कि उत्थान कुछ पदार्थ नहीं है यावत् सर्व भाव नियत हैं, यह तेरा कथन मिथ्या अर्थात् असत्य है" ॥ २०० ॥

एत्थ णं से सद्दालपुत्ते आजीविओवासए सम्बुद्धे ॥ २०१ ॥

यह बचन सुनकर उस शब्दालपुत्र आजीविकोपासकको सम्यक् ज्ञान प्राप्त हुआ ॥ २०१ ॥

तए णं से सद्दालपुत्ते आजीविओवासए समणं भगवं महावीरं वन्दइ नमंसइ, २ त्ता एवं वयासी। "इच्छामि णं, भन्ते, तुब्भं अन्तिए धम्मं निसामेत्तए" ॥ २०२ ॥

तब वह शब्दालपुत्र आजीविकोपासक श्रमण भगवान् महावीरजीको वन्दना नमस्कार करके ऐसे बोला। "हे भगवन्?। मैं आपके पास धर्म श्रवण करनेकी इच्छा करता हूं" ॥ २०२ ॥

तए णं समणे भगवं महावीरे सद्दालपुत्तस्स आजीविओवासगस्स तीसे य जाव धम्मं परिकहेइ ॥ २०३ ॥

तब श्रमण भगवान् महावीरजीने शब्दालपुत्र आजीविकोपासकको यावत् धर्मोपदेश दिया ॥ २०३ ॥

तए णं से सद्दालपुत्ते आजीविओवासए समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तिए धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठ तुट्ठ जाव हियए जहा आणन्दो तहा गिहिधम्मं पडिवज्जइ। नवरं एगा हिरण्णकोडी निहाणपउत्ता एगा हिरण्णकोडी वड्ढिपउत्ता एगा हिरण्णकोडी पवित्थरपउत्ता एगे वए दसगोसाहस्सिएणं वएणं जाव समणं भगवं महावीरं वन्दइ नमंसइ, २ त्ता जेणेव पोलासपुरे नयरे तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता पोलासपुरं नयरं मज्झं मज्झेणं जेणेव सए गिहे जेणेव अग्गिमित्ता भारिया तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता अग्गिमित्तं भारियं एवं वयासी। "एवं, खलु, देवाणुप्पिए, समणे भगवं महावीरे जाव समोसढे, तं गच्छाहि णं तुमं, समणं भगवं महावीरं

वन्दाहि जाव पज्जुवासाहि, समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तिए पञ्चाणुवइयं सत्तसिक्खावइयं दुवालसविहं गिहिधम्मं पडिवज्जाहि" ॥ २०४ ॥

तब वह शब्दालपुत्र आजीविकोपासक श्रमण भगवान् महावीरजीके पाससे धर्म्म सुनकर यावत् हृदयमें अति प्रसन्न हुआ। और उसने उसी प्रकारही आनन्दके समान गृहस्थ-धर्मको अंगीकार किया ॥ और एक करोड़ स्वर्णमुद्रा निधानप्रयुक्त, एक करोड़ स्वर्णमुद्रा वृद्धिप्रयुक्त, एक करोड़ प्रविस्तरप्रयुक्त और दशसहस्र गौके एक वर्गका आगार रखा यावत् श्रमण भगवान् महावीरजीको वन्दना नमस्कार करके पोलासपुर नगरमें गया, वहां जाकर पोलासपुर नगरके मध्यसे चलकर जहां स्वगृह और अग्निमित्रा भार्याथी वहां पहुंचकर अग्निमित्रा भार्याको ऐसे बोला। "हे देवानुप्रिये! निश्चयसे श्रमण भगवान् महावीर जी यावत् यहां पधारे हैं, इसकारण तू जा और श्रमण भगवान् महावीरजीको वन्दना नमस्कार कर, यावत् सेवाभक्ति कर, और श्रमण भगवान् महावीरजीके पास पांच अणुव्रत सात शिक्षाव्रत युक्त द्वादशविधके गृहस्थ धर्मको अंगीकार कर" ॥ २०४ ॥

तए णं सा अग्गिमित्ता भारिया सद्दालपुत्तस्स

समणोवासगस्स "तह" त्ति एयमट्ठं विणएण पडि-
सुणेइ ॥ २०५ ॥

तब उस अग्निमित्रा भार्याने शब्दालपुत्र आजीविको-पासकके ("तथास्तु" ऐसा कहके) इस अर्थको विनयसे श्रवण किया ॥ २०५ ॥

तए णं से सद्दालपुत्ते समणोवासए कोडुम्बिय-पुरिसे सद्दावेइ, २ त्ता एवं वयासी । "खिप्पामेव, भो देवाणुप्पिया, लहुकरणजुत्तजोइयं समखुरवालि-हाणसमलिहियसिङ्गएहिं जम्बूणयामयकलाव जोत्तप-इविसिट्ठएहिं रययामयघण्टसुत्तरज्जुगवरकश्चणखइय नत्थापग्गहोग्गहियएहिं नीलुप्पलकया मेलएहिं पव-रगोणजुवाणएहिं नाणामणिकणगघण्टियाजालपरि-गयं सुजायजुगजुत्तउज्जुगपसत्थसुविरइयनिम्मियं प-वरलक्खणोववेयं जुत्तामेव धम्मियं जाणप्पवरं उव-ट्ठवेह, २ त्ता मम एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह ॥ २०६ ॥

तत्पश्चात् शब्दालपुत्र श्रमणोपासक कौटुम्बिक सेवकको बुलाकर ऐसे बोला । हे देवानुप्रिय! सम (बराबर) खुर और पूंछवाले तथा सम शृंगवाले, जाम्बूनद रत्नमय ग्रीवा-

भरण (गलेका भूषण) से अलंकृत तथा कंठरज्जूसे सुशोभित, रजतमय घण्टिकासे तथा सुवर्णबद्ध कार्पासिक सूत्रमय नस्त वा नासारज्जुसे सुशोभित तथा नीलोत्पल (नीलाकमल) कृत शेखर (कलगी) से युक्त (ऐसे) दो प्रधान वृषभों (बैलों) को दक्ष पुरुषोंके बनाये हुये नाना प्रकारके रत्नों वा घण्टों के जालसे परिवेष्टित, सरल सुघटित वा सुनिर्मित काष्ठमय सुजात रथमें सम्बद्ध करके प्रवर लक्षणोपेत धार्मिक रथको मुझे शीघ्र अर्पण करो ॥ २०६ ॥

तए णं ते कोडुम्बियपुरिसा जाव पच्चप्पिणन्ति ॥ २०७ ॥

तब कौटुम्बिक सेवकोंने यावत् रथको प्रत्यर्पण किया ॥२०७॥

तए णं सा अग्गिमित्ता भारिया ण्हाया जाव पायच्छित्ता सुद्धप्पावेसाइं जाव अप्पमहग्घाभरणालङ्कियसरीरा चेडिया चक्कवाल परिकिण्णा धम्मियं जाणप्पवरं दुरुहइ, २ त्ता पोलासपुरं नगरं मज्झं मज्झेणं निग्गच्छइ, २ त्ता जेणेव सहस्सम्बवणे उज्जाणे तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता धम्मियाओ जाणाओ पच्चोरुहइ, २ त्ता चेडियाचक्कवालपरिवुडा जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, २

त्ता तिक्खुत्तो जाव वन्दइ नमंसइ, २ त्ता नच्चासन्ने नाइदूरे जाव पञ्जलिउडा ठिइया चेव पज्जुवासइ ॥२०८

तब वह अग्निमित्रा भार्या स्नान यावत् प्रायश्चित्त करके शुद्ध वस्त्र यावत् अल्प भारवाले, बहुमूल्य आभरण शरीर पर अलंकृत करके चक्रके समान दासी आदिसे घिरी हुई धार्मिक रथपर चढकर पोलासपुर नगरके मध्यसे जाकर जहां सहस्राम्रबन था वहां गई और धार्मिक शकटसे उतर-कर, सर्व दासी आदिसहित जहां श्रमण भगवान् महावी-रजी विराजमान थे वहां जाकर तीन वार यावत् बन्दना नमस्कार हस्त जोड़कर, ना ही अति निकट और ना ही अति दूर खड़े होकर उसने सेवा भक्ति की ॥ २०८ ॥

तए णं समणे भगवं महावीरे अग्गिमित्ताए तीसे य जाव धम्मं केहइ ॥ २०९ ॥

तब श्रमण भगवान् महावीरजीने अग्निमित्राको तथा उसकी सखियोंको यावत् धर्म्मोपदेश दिया ॥ २०९ ॥

तए णं सा अग्गिमित्ता भारिया समणस्स भग-वओ महावीरस्स अन्तिए धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठा समणं भगवं महावीरं वन्दइ नमंसइ, २ त्ता एवं वयासी । "सद्दहामि णं, भन्ते, निग्गन्थं पाव-

यणं जाव से जहेयं तुब्भे वयह । जहा णं देवाणुप्पियाणं अन्तिए बहवे उग्गा भोगा जाव पव्वइया, नो खलु अहं तहा संचाएमि देवाणुप्पियाणं अन्तिए मुण्डा भवित्ता जाव । अहणं देवाणुप्पियाणं अन्तिए पञ्चाणुव्वइयं सत्तसिक्खावइयं दुवालसविहं गिहिधम्मं पडिवज्जिस्सामि । अहासुहं, देवाणुप्पिया, मा पडिबन्धं करेह" ॥ २१० ॥

तब वह अग्निमित्रा भार्या श्रमण भगवान् महावीरजीके पास धर्म्म सुनकर और प्रसन्न होकर श्रमण भगवान् महावीरजीको बन्दना नमस्कार करके ऐसे बोली ॥ "हे भगवन्! मैं जिन बचनोंमें श्रद्धा करती हूं यावत् जो आपने प्रतिपादन किया है वह नितांत सत्य है । यद्यपि आपके पास बहुत क्षत्रिय अथवा पूज्य यावत् दीक्षा ग्रहण करते हैं, तदपि मैं देवानुप्रियके (आपके) पास मुण्डित होनेको यावत् समर्थ नहीं हूं । इसलिये मैं आपके पास पांच अणुव्रत सात शिक्षाव्रत युक्त द्वादशविधके गृहस्थ धर्मकोही अंगीकार करूंगी । (भगवान्ने उत्तर दिया) हे देवानुप्रिय! जैसे तुम्हें सुख हो वैसे ही करो किन्तु इस काममें कोई निरोध (रोक) मत करो ॥ २१० ॥

तए णं सा अग्गिमित्ता भारिया समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तिए पञ्चाणुव्वइयं सत्तसिक्खावइयं दुवालसविहं सावगधम्मं पडिवज्जइ, २ त्ता समणं भगवं महावीरं वन्दइ नमंसइ, २ त्ता तामेव धम्मियं जाणप्पवरं दुरुहइ, २ त्ता जामेव दिसं पाउब्भूया तामेव दिसं पडिगया ॥ २११ ॥

तब वह अग्निमित्रा भार्या श्रमण भगवान् महावीरजीके पास पांच अणुव्रत और सात शिक्षाव्रत युक्त द्वादश प्रकारके श्रावक धर्मको अंगीकार करके, और श्रमण भगवान् महावीरजीको वन्दना नमस्कार करके, उसी धार्मिक यानमें (रथमें) चढ़ कर जिस दिशासे प्रगट हुई थी उसी दिशाको चली गई ॥ २११ ॥

तए णं समणे भगवं महावीरे अन्नया कयाइ पोलासपुराओ सहस्सम्बवणाओ पडिनिग्गच्छइ, २ त्ता बहिया जणवयविहारं विहरइ ॥ २१२ ॥

तब श्रमण भगवान् महावीरजी अन्यदा समय पोलासपुर और सहस्राम्रवनको छोड़कर किसी अन्य विहारको गमन कर गये ॥ २१२ ॥

तए णं से सद्दालपुत्ते समणोवासए जाए अभिगय जीवाजीवे जाव विहरइ ॥ २१३ ॥

तब जीव अजीवको जाननेहारा वह शब्दालपुत्र श्रमणोपासक मुनियोंको प्राशुक, एषणीय अन्न पान तथा वस्त्रादि प्रदान करता हुआ यावत् विचरने लगा ॥ २१३ ॥

तए णं से गोसाले मङ्खलिपुत्ते इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे, "एवं खलु सद्दालपुत्ते आजीवियसमयं वमित्ता समणाणं निग्गन्थाणं दिट्ठिं पडिवन्ने, तं गच्छामि णं सद्दालपुत्तं आजीविओवासयं समणाणं निग्गन्थाणं दिट्ठिं वामेत्ता पुणरवि आजीवियदिट्ठिं गेण्हावित्तए" त्ति कट्टु एवं सम्पेहेइ, २ त्ता आजीवियसङ्घसम्परिवुडे जेणेव पोलासपुरे नयरे जेणेव आजीवियसभा तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता आजीवियसभाए भण्डगनिक्खेवं करेइ, २ त्ता कइवएहिं आजीविएहिं सद्धिं जेणेव सद्दालपुत्ते समणोवासए तेणेव उवागच्छइ ॥ २१४ ॥

तत्पश्चात् इस जनश्रुतिको सुनकर (कि शब्दालपुत्र श्रमण भगवान् महावीरजी का उपासक होगया है) गोशालमङ्खलिपुत्रने विचार किया, "निश्चयसे शब्दालपुत्रने आजी-

विक मतको छोड़कर, श्रमण और निर्ग्रन्थिके उपदेशको ग्रहण किया है इसलिये मैं जाता हूं और शब्दालपुत्र आजीविकोपासकको श्रमण और निर्ग्रन्थिके धर्मसे विमुख करके फिर आजीविक मतमें प्रविष्ट करता हूं." ऐसे विचार कर आजीविक परिवारसहित पोलासपुर नगरमें जहां आजीविक-सभास्थान था, वहां जाकर आजीविक सभामें पात्रादिको स्थापन करके कितनेक आजीविकोंके साथ जहां शब्दालपुत्र श्रमणोपासक था वहां गया ॥ २१४ ॥

तए णं से सद्दालपुत्ते समणोवासए गोसालं मङ्खलिपुत्तं एज्जमाणं पासइ, २ त्ता नो आढाइ नो परिजाणइ, अणाढामाणे अपरिजाणमाणे तुसिणीए संचिट्ठइ ॥ २१५ ॥

तब गोशाल मङ्खलिपुत्रको आया हुआ देखकर उस शब्दालपुत्र श्रमणोपासकने ना तो उसको नमस्कार किया और ना ही उसका आदर वा सत्कार किया किन्तु (विना नमस्कार वा सन्मान किये ही) मौन रहा ॥ २१५ ॥

तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते सद्दालपुत्तेणं समणोवासएणं अणाढाइज्जमाणे अपरिजाणिज्जमाणे पीढ फलगसिज्जासंथारट्ठाए समणस्स भगवओ महा-

वीरस्स गुणकित्तणं करेमाणे सद्दालपुत्तं समणोवा सयं एवं वयासी ॥ "आगए णं, देवाणुप्पिया, इहं महामाहणे" ॥ २१६ ॥

तब गोशाल मङ्खलिपुत्र शब्दालपुत्र श्रमणोपासकसे अनादर वा असत्कार प्राप्त करने पर भी आसन, फलक शय्या वा संस्तारक ग्रहण करनेके लिये श्रमण भगवान् महावीरजीका गुण कीर्त्तन करते हुए शब्दालपुत्र श्रमणोपासकको ऐसे बोला। "हे देवानुप्रिय! यहां एक परम दयालु पुरुष पधारे हैं" ॥ २१६ ॥

तए णं से सद्दालपुत्ते समणोवासए गोसालं मङ्खलिपुत्तं एवं वयासी। "के णं, देवाणुप्पिया, महामाहणे?" ॥ २१७ ॥

तब वह शब्दालपुत्र श्रमणोपासक गोशाल मङ्खलिपुत्रको ऐसे बोला। "हे देवानुप्रिय! कौन महा दयावान् हैं?" ॥२१७॥

तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते सद्दालपुत्तं समणोवासयं एवं वयासी। "समणे भगवं महावीरे महामाहणे" ॥

"से केणट्ठेणं, देवाणुप्पिया, एवं वुच्चइ समणे भगवं महावीरे महामाहणे?" ॥

"एवं खलु, सद्दालपुत्ता, समणे भगवं महावीरे महामाहणे उप्पन्नणाणदंसणधरे जाव महियपूइए जाव तच्चकम्मसम्पया सम्पउत्ते। से तेणट्ठेणं, देवाणुप्पिया, एवं वुच्चइ समणे भगवं महावीरे महामाहणे। आगए णं, देवाणुप्पिया, इहं महागोवे" ॥

"के णं, देवाणुप्पिया, महागोवे?" ॥

"समणे भगवं महावीरे महागोवे" ॥

"से केणट्ठेणं, देवाणुप्पिया, जाव महागोवे?" ॥

"एवं खलु, देवाणुप्पिया, समणे भगवं महावीरे संसाराडवीए बहवे जीवे नस्समाणे विणस्समाणे खज्जमाणे छिज्जमाणे भिज्जमाणे लुप्पमाणे विलुप्पमाणे धम्ममएणं दण्डेणं सारक्खमाणे सङ्गोवेमाणे निव्वाणमहावाडं साहत्थिं सम्पावेइ। से तेणट्ठेणं, सद्दालपुत्ता, एवं वुच्चइ समणे भगवं महावीरे महागोवे। आगए णं, देवाणुप्पिया, इहं महासत्थवाहे" ॥

"के णं, देवाणुप्पिया, महासत्थवाहे?" ॥

"सद्दालपुत्ता, समणे भगवं महावीरे महासत्थवाहे" ॥

"से केणट्ठेणं ?" ॥

"एवं खलु, देवाणुप्पिया, समणे भगवं महावीरे संसाराडवीए बहवे जीवे नस्समाणे विणस्समाणे जाव विलुप्पमाणे धम्ममएणं पन्थेणं सारक्खमाणे निव्वाणमहापट्टणाभिमुहे साहत्थिं सम्पावेइ। से तेणट्ठेणं, सद्दालपुत्ता, एवं वुच्चइ समणे भगवं महावीरे महासत्थवाहे। आगए णं, देवाणुप्पिया, इहं महाधम्मकही" ॥

"केणं, देवाणुप्पिया, महाधम्मकही ?" ॥

"समणे भगवं महावीरे महाधम्मकही" ॥

"से केणट्ठेणं समणे भगवं महावीरे महाधम्मकही ?" ॥

"एवं खलु, देवाणुप्पिया, समणे भगवं महावीरे महइमहालयंसि संसारंसि बहवे जीवे नस्समाणे विणस्समाणे उम्मग्गपडिवन्ने सप्पहविप्पणट्ठे मिच्छत्तबलाभिभूए अट्ठविहकम्मतमपडलपडोच्छन्ने

बहूहिं अट्ठेहि य जाव वागरणेहि य चाउरन्ताओ संसारकन्ताराओ साहत्थिं नित्थारेइ । से तेणट्ठेणं, देवाणुप्पिया, एवं वुच्चइ समणे भगवं महावीरे महाधम्मकही । आगए णं, देवाणुप्पिया, इहं महानिज्जामए" ॥

"के णं, देवाणुप्पिया, महानिज्जामए?" ॥

"समणे भगवं महावीरे महानिज्जामए" ॥

"से केणट्ठेणं?" ॥

"एवं खलु, देवाणुप्पिया, समणे भगवं महावीरे संसारमहासमुद्दे बहवे जीवे नस्समाणे विणस्समाणे वुड्डमाणे निवुड्डमाणे उप्पियमाणे धम्ममईए नावाए निव्वाण तीराभिमुहे साहत्थिं सम्पावेइ । से तेणट्ठेणं, देवाणुप्पिया, एवं वुच्चइ समणे भगवं महावीरे महानिज्जामए" ॥ २१८ ॥

तब वह गोशाल मङ्खलिपुत्र शब्दालपुत्र श्रमणोपासकको ऐसे बोला । "श्रमण भगवान् महावीरजी परम दयालु हैं" ॥ (शब्दालपुत्रने पूछा) "हे देवानुप्रिय! तू किस कारण कहता है कि श्रमण भगवान् महावीरजी परम दयालु है?" ॥

(गोशालने उत्तर दिया) "हे शब्दालपुत्र! निश्चयसे श्रमण भगवान् महावीरजी महाकारुणिक, ज्ञानदर्शनके धारक यावत् परम पूज्य यावत् सत्य कर्म सम्पत्तिसे युक्त हैं। हे देवानुप्रिय! इस कारण मैं ऐसे कहता हूं कि श्रमण भगवान् महावीरजी महाकृपालु हैं। हे देवानुप्रिय! एक महागोप यहां पधारे हैं" ॥

(शब्दालपुत्रने पूछा) "हे देवानुप्रिय! महागोप कौन हैं?" ॥

(गोशालने उत्तर दिया) "श्रमण भगवान् महावीरजी महागोप हैं?" ॥

(शब्दालपुत्रने पुनः पूछा) "हे देवानुप्रिय! तू किस कारण कहता है कि श्रमण भगवान् महावीरजी महागोप हैं?"।

(गोशालने उत्तर दिया) "हे देवानुप्रिय! श्रमण भगवान् महावीरजी संसाररूपी महारण्यमें बहुतसे जीवोंको, नष्ट विनष्ट, खादित, खण्डित, भेदित, लुप्त वा विलुप्त होनेसे धर्मरूपी दण्डके द्वारा उनकी रक्षा वा संभाल करते हुये अपने हस्तकमलोंसे मोक्षके पथपर आरूढ करते हैं इसकारण, हे शब्दालपुत्र! मैं कहता हूं कि श्रमण भगवान् महावीरजी महागोप हैं। हे देवानुप्रिय! यहां महासार्थवाही पधारे हैं" ॥

(शब्दाल पुत्रने फिर पूछा) "हे देवानुप्रिय! कौन महासार्थवाही हैं?" ॥

(गोशालने उत्तर दिया) "हे शब्दालपुत्र ! श्रमण भगवान् महावीरजी महासार्थवाही हैं।

(शब्दालपुत्र बोला) "हे देवानुप्रिय ! तू किस लिये कहता है कि श्रमण भगवान् महावीरजी महासार्थवाही हैं ?" ।

(गोशालने उत्तर दिया) "हे देवानुप्रिय ! निश्चयसे श्रमण भगवान् महावीरजी इस संसार अटवीमें बहुत जीवोंको नष्ट विनष्ट यावत् विलुप्त होनेसे उनकी रक्षा और संभाल करते हुये अपने हस्तकमलोंसे धर्ममय दण्डसे नगररूपी निर्वाणके पथरूपी मुखमें प्रविष्ट करते हैं इसकारण, हे शब्दालपुत्र ! मैं कहता हूं कि श्रमण भगवान् महावीरजी महासार्थवाही हैं। हे देवानुप्रिय ! यहां महाधर्मोपदेशक पधारे हैं ॥

(शब्दालपुत्रने पूछा) "हे देवानुप्रिय ! "धर्मोपदेशवक्ता कौन हैं ?" ॥

(गोशालने उत्तर दिया) "श्रमण भगवान् महावीरजी महाधर्मोपदेशक हैं" ॥

(शब्दालपुत्रने फिर पूछा) "श्रमण भगवान् महावीरजी किस प्रकार महाधर्मोपदेशक हैं ?" ॥

(गोशालने उत्तर दिया) "हे देवानुप्रिय ! श्रमण भगवान् महावीरजी इस अपार संसारमें अनेक जीवोंको जिन्होंने मिथ्यात्वके अधीन होकर और आठ प्रकारके कर्मरूपी घोर अन्धकारसे प्रत्यवच्छन्न होकर सत्य मार्गको छोड़कर कुमार्ग-

को ग्रहण किया है (उनको) अनेक अर्थ, हेतु यावत् व्याकरण (प्रश्नोत्तर) द्वारा समझाकर तथा निरुत्तर करके अपने हस्तकमलोंसे इस चातुरन्त संसारसे निस्तरण कराते हैं इसलिये, हे देवानुप्रिय! मै कहता हूं कि श्रमण भगवान् महावीरजी महाधर्म्मोपदेशवक्ता हैं। हे देवानुप्रिय! यहां एक महान् नियामक पधारे हैं" ॥

(शब्दालपुत्रने फिर पूछा) "हे देवानुप्रिय! कौन महान् नियामक हैं?" ॥

(गोशालाने उत्तर दिया) "श्रमण भगवान् महावीरजी महानियामक (धार्मिक जहाज़के रक्षक) हैं" ॥

(शब्दालपुत्रने फिर पूछा) "कैसे श्रमण भगवान् महावीरजी महानियामक हैं?" ॥

(गोशालने उत्तर दिया) "हे देवानुप्रिय! श्रमण भगवान् महावीरजी इस संसाररूपी महासमुद्रमें नष्ट होते हुये तथा डूबते हुए बहुत जीवोंको धर्ममयी नावमें स्थान देकर निर्वाणरूपी तीरपर अपने हस्तकमलोंसे पहुंचाते हैं इसलिये, हे देवानुप्रिय! मैं कहता हूं कि श्रमण भगवान् महावीरजी महानियामक हैं" ॥ २१८ ॥

तएणं से सद्दालपुत्ते समणोवासए गोसालं मंखलिपुत्तं एवं वयासी। "तुब्भे णं, देवाणुप्पिया, इय-

च्छेया जाव इयनिउणा इयनयवादी इयउवएस-
लद्धा इयविण्णाणपत्ता, पभू, णं तुब्भे मम धम्माय-
रिएणं धम्मोवएसएणं भगवया महावीरेणं सद्धिं
विवादं करेत्तए?" ॥

"नो तिणट्ठे समट्ठे" ॥

"से केणट्ठेणं, देवाणुप्पिया, एवं वुच्चइ नो खलु
पभू तुब्भे मम धम्मायरिएणं जाव महावीरेणं सार्द्धं
विवादं करेत्तए?" ॥

"सद्दालपुत्ता, से जहानामए केइपुरिसे तरुणे
जुगवं जाव निउणसिप्पोवगए एगं महं अयं वा
एलयं वा सूयरं वा कुक्कुडं वा तित्तिरं वा वट्टयं
वा लावयं वा कवोयं वा कविञ्जलं वा वायसं वा
सेणयं वा हत्थंसि वा पायंसि वा खुरंसि वा पुच्छंसि
वा पिच्छंसि वा सिङ्गंसि वा विसाणंसि वा रोमंसि
वा जहिं जहिं गिराहइ, तहिं तहिं निच्चलं निप्फन्दं
धरेइ। एवामेव समणे भगवं महावीरे ममं बहूहिं
अट्ठेहि य हेऊहि य जाव वागरणेहि य जहिं जहिं
गिराहइ, तहिं तहिं निप्पट्ठ पसिणवागरणं करेइ।

से तेणट्ठेणं, सद्दालपुत्ता, एवं वुच्चइ नो खलु पभू अहं तव धम्मायरिएणं जाव महावीरेणं सद्धिं विवादं करेत्तए" ॥ २१९ ॥

तब वह शब्दालपुत्र श्रमणोपासक गोशालमङ्खलिपुत्रको ऐसे बोला। "हे देवानुप्रिय! "तू अत्यन्त चतुर, निपुण, और नीतिवक्ता है तुझको उपदेश और विज्ञान प्राप्त होगये हैं। क्या तू मेरे धर्म्माचार्य, धर्मोपदेशक प्रभू भगवान् महावीरजीके साथ विवाद कर सक्ता है?"।

(गोशालने उत्तर दिया) "मैं विवाद करनेके समर्थ नहीं हूं" ॥

(शब्दालपुत्रने पूछा) "हे देवानुप्रिय! किस कारणसे तू ऐसा कहता है कि तू मेरे धर्माचार्य्य यावत् महावीरजीके साथ विवाद करनेके असमर्थ है" ॥

(गोशालने उत्तर दिया) "हे शब्दालपुत्र! जैसे एक तरुण (युवा) युगवान् यावत् शिल्पकारी पुरुष किसी महान् अज, उरभ्र, (मेढ्ढा) शूकर, कुक्कुट, तित्तिर, वर्तक, लावक, कपोत (कबूतर), कपिञ्जल, (पपीहा) वायस, श्येनक (बाज़) को जहां जहां हस्त, पाद, पुच्छ, पक्ष, शृङ्ग, विषाण, रोमपर पकड़ता है, वहां वहां उस पक्षीको अचल वा निष्पन्द अर्थात् चलनेके असमथ कर

देता है ऐसे ही श्रमण भगवान् महावीरजी मुझे बहुत अर्थ, हेतु यावत् व्याकरणसे जहां जहां पकड़ेंगे वहां वहां मेरी कल्पनाओंका खण्डन कर देंगे। इस कारणसे, हे शब्दालपुत्र! मैं कहता हूं कि मैं तेरे प्रभु धर्म्माचार्य्य यावत् महावीरजीके साथ विवाद नहीं कर सक्ता हूं" ॥ २१९ ॥

तए णं से सद्दालपुत्ते समणोवासए गोसालं मंखलिपुत्तं एवं वयासी। "जम्हा णं, देवाणुप्पिया, तुब्भे मम धम्मायरियस्स जाव महावीरस्स सन्तेहिं तच्चेहिं तहिएहिं सब्भूएहिं भावेहिं गुणकित्तणं करेह, तम्हाणं अहं तुब्भे पाडिहारिएणं पीढ जाव संथारएणं उवनिमन्तेमि। नो चेव णं धम्मो त्ति वा तवो त्ति वा। तं गच्छह णं तुब्भे मम कुम्भारावणेसु पाडिहारियं पीढ फलग जाव ओगिण्हित्ताणं विहरह" ॥ २२० ॥

तब वह शब्दालपुत्र श्रमणोपासक गोशाल मङ्खलिपुत्रको ऐसे बोला। 'हे देवानुप्रिय! क्योंकि तूंने मेरे धर्म्माचार्य्य यावत् महावीरजीके सत्य, तथ्य, अकृत्रिम और सद्भूत भावोंकी स्तुति अर्थात् प्रशंसा की है, इसलिये मैं तुझे प्रातिहारिक आसन यावत् संस्तारकके लिये आमन्त्रित करता हूं।

किन्तु धर्म्म या तपके लिये नहीं । इसकारण तू जा और मेरी कुम्भकारपण्यशालाओंमें प्रातिहारिक आसन, पीढ यावत् संस्तारक ग्रहण करके वहांही विचर" ॥ २२० ॥

तए णं से गोसाले मङ्खलिपुत्ते सद्दालपुत्तस्स समणोवासयस्स एयमट्ठं पडिसुणेइ, २ त्ता कुम्भारावणेसु पाडिहारियं पीढ जाव ओगिण्हित्ताणं विहरइ ॥२२१॥

तब वह गोशाल मङ्खलिपुत्र शब्दालपुत्र श्रमणोपासककी इस बातको सुनकर कुम्भकार पण्यशालाओंमें प्रातिहारिक पीढ यावत् संस्तारक ग्रहण करके वहांही विचरने लगा ॥२२१॥

तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते सद्दालपुत्तं समणोवासयं जाहे नो संचाएइ बहूहिं आघवणाहि य पण्णवणाहि य सण्णवणाहि य विण्णवणाहि य निग्गन्थाओ पावयणाओ चालित्तए वा खोभित्तए वा विपरिणामित्तए वा, ताहे सन्ते तन्ते परितन्ते पोलासपुराओ नगराओ पडिणिक्खमइ, २ त्ता बहिया जणवयविहारं विहरइ ॥ २२२ ॥

तब वह गोशाल मंखलिपुत्र बहुत आख्यान, व्याख्या और सञ्ज्ञापनसे शब्दालपुत्र श्रमणोपासकको जिन वचनोंसे चलायमान, क्षोभित, और परिणामोंसे विपरीत करनेके

असमर्थ अपने आपको जानकर, और श्रान्त, तान्त वा निराश होकर पोलासपुर नगरसे निकलकर बाहिर अन्य देशको चला गया ॥ २२२ ॥

तए णं तस्स सद्दालपुत्तस्स समणोवासयस्स बहूहिं सील जाव भावेमाणस्स चोद्दस संवच्छरा वइक्कन्ता। पण्णरसमस्स संवच्छरस्स अन्तरा वट्टमाणस्स पुव्वरत्तावरत्तकाले जाव पोसहसालाए समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तियं धम्मपण्णत्तिं उवसम्पज्जित्ताणं विहरइ ॥ २२३ ॥

तब बहुत शीलव्रतसे (यावत्) अपना कल्याण करते हुये शब्दालपुत्र श्रमणोपासकको चतुर्दश वर्ष व्यतीत होगये (वर्त्तमान पंद्रहवें वर्षके मध्यमें अर्ध रात्रिके समय (यावत्) पोषधशालामें श्रमण भगवान् महावीरजीके पास ग्रहण किये हुये धर्मको पालता हुआ जब वह विचरता था ॥ २२३ ॥

तए णं तस्स सद्दालपुत्तस्स समणोवासयस्स पुव्वरत्तावरत्तकाले एगे देवे अन्तियं पाउब्भवित्था ॥२२४॥

तब उस शब्दालपुत्र श्रमणोपासकके पास अर्धरात्रिके समय एक देवता प्रगट हुआ ॥ २२४ ॥

तए णं से देवे एगं महं नीलुप्पल जाव असिं

गहाय सद्दालपुत्तं समणोवासयं एवं वयासी । जहा चुलणीपियस्स तहेव देवो उवसग्गं करेइ । नवरं एक्केक्के पुत्ते नव मंससोल्लए करेइ । जाव कणीयसं घाएइ, २ त्ता जाव आयञ्चइ ॥ २२५ ॥

तब वह देवता एक महान् नीलोत्पल खड्गको ग्रहण करके शब्दालपुत्र श्रमणोपासकको ऐसे बोला । जैसे चुलणीपिताके पुत्रोंके साथ वर्त्ताव हुआ था उसीप्रकार देवने शब्दालपुत्रके पुत्रोंके साथ उपद्रव किया इतना विशेष कि यहां एक एक पुत्रके मांसके नौं नौं खण्ड किये यावत्) कनीयस पुत्रको मारकर उसको दग्ध करके रुधिर और मांसको उसके शरीरपर छिड़का ॥ २२५ ॥

तएणं से सद्दालपुत्ते समणोवासए अभीए जाव विहरइ ॥ २२६ ॥

तब वह शब्दालपुत्र श्रमणोपासक भय रहित यावत् धर्ममें दृढ रहा ॥ २२६ ॥

तएणं से देवे सद्दालपुत्तं समणोवासयं अभीयं जाव पासित्ता चउत्थं पि सद्दालपुत्तं समणोवासयं एवं वयासी । "हं भो सद्दालपुत्ता, समणोवासया, अपत्थियपत्थिया जाव न भञ्जसि, तओ ते जा इमा

अग्गिमित्ता भारिया धम्मसहाइया धम्मविइज्जिया धम्माणुरागरत्ता समसुहदुक्खसहाइया, तं ते साओ गिहाओ नीणेमि, २ त्ता तव अग्गओ घाएमि, २ त्ता नव मंससोल्लए करेमि, २ त्ता आदाणभरियंसि कडाहयंसि अद्दहेमि, २ त्ता तव गायं मंसेण य सो-णिएण य आयञ्चामि, जहा णं तुमं अट्टदुहट्ट जाव ववरोविज्जसि" ॥ २२७ ॥

तब वह देवता शब्दालपुत्र श्रमणोपासकको अभीत यावत् देखकर चतुर्थ वार शब्दालपुत्र श्रमणोपासकको ऐसे बोला। "हे शब्दालपुत्र श्रमणोपासक ! कुमार्ग इच्छुक ! यदि तू आज शीलव्रत यावत् भंग न करेगा तो मैं आज तेरी अग्निमित्रा भार्याको जो धर्म्म सहायिका, धर्मसे परिचित, वा धर्मानु-रागयुक्त और सुखदुःखको सम्यक् प्रकारसे सहन करनेवाली है, (उसको) तेरे गृहसे निकालकर तेरे आगे उसका वध करूंगा, फिर उसके मांसके नौ ९ शूल्यक करके आदाणसे भरे हुये कटाहमें दहन करके तेरे शरीरपर मांस और रुधि-रको छिड़कूंगा जिससे तूं आर्त और दुःखोंके वश होकर जीवनसे विमुक्त हो जावेगा ॥ २२७ ॥

तए णं से सद्दालपुत्ते समणोवासए तेणं देवेणं

एवं वुत्ते समाणे अभीए जाव विहरइ ॥ २२८ ॥

तब वह शब्दालपुत्र श्रमणोपासक उस देवतासे ऐसा कहे जाने पर भयरहित यावत् धर्ममें स्थिर रहा ॥ २२८ ॥

तएणं से देवे सद्दालपुत्तं समणोवासयं दोच्चं पि तच्चं पि एवं वयासी। "हं भो सद्दालपुत्ता समणोवासया," तं चेव भणइ ॥ २२९ ॥

तब वह देवता शब्दालपुत्र श्रमणोपासकको दो तीन वार ऐसे बोला। हे शब्दालपुत्र श्रमणोपासक! यदि तू आज शीलव्रत भंग न करेगा तो मैं आज तेरी अग्निमित्रा भार्याको तेरे गृहसे निकालकर उसको मारकर और आदाणसे पूरित कटाह में उसको दग्ध करके मांस और रुधिरको तेरे शरीर पर सिञ्चन करूंगा इत्यादि उसी प्रकार कहा ॥ २२९ ॥

तए णं तस्स सद्दालपुत्तस्स समणोवासयस्स तेणं देवेणं दोच्चं पि तच्चं पि एवं वुत्तस्स समाणस्स अयं अज्झत्थिए ४ समुप्पन्ने। एवं जहा चुलणीपिया तहेव चिन्तेइ। "जेणं ममं जेट्ठं पुत्तं, जेणं ममं मज्झिमयं पुत्तं, जेणं ममं कणीयसं पुत्तं जाव आयञ्चइ, जा वि य णं ममं इमा अग्गिमित्ता भारिया समसुहदुक्खसहाइया, तं पि य इच्छइ साओ

गिहाओ नीणेत्ता ममं अग्गओ घाएत्तए । तं सेयं खलु ममं एयं पुरिसं गिरिहत्तए" त्ति कट्टु उट्ठाइए जहा चुलणीपिया तहेव सव्वं भाणियव्वं नवरं अग्गिमित्ता भारिया कोलाहलं सुणित्ता भणइ । सेसं जहा चुलणीपिया वत्तव्वया । नवरं अरुणभूए विमाणे उववन्ने जाव महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ ५ ॥ २३०॥

तब दो तीन वार ऐसा कहा जानेपर उस शब्दालपुत्र श्रमणोपासकके मनमें अध्यास्थित संकल्प उत्पन्न हुआ । अहो! यह अनार्य पुरुष बड़ा पापकर्म करता है क्योंकि इसने मेरे ज्येष्ट, मध्यम और कनीयस पुत्रोंको मारकर यावत् उनको कटाहमें दहन करके मांस और रुधिरको मेरी देहपर छिड़का है और अब मेरी प्रिया अग्निमित्राकोभी जो सुख तथा दुःखको भली प्रकारसे सहन करती हैं (उसको) मेरे गृहसे निकालकर उसका वध करना चाहता है इस लिये उचित हो यदि मैं इसे पकडूं इत्यादि चुलणीपिताके समान ही विचार किया ऐसा विचार कर जब शब्दालपुत्र उठा तब उसके हाथमें स्तम्भ आगया और देवता आकाशमें चला गया इस कारण उसने कोलाहल किया (चुलणीपिताके समान १३८–१४२ उसीप्रकार सब कहना चाहिये) फिर अग्निमित्राने कोलाहल शब्दको सुनकर अपने पतिसे उसका

कारण पूछा यावत् चुलणीपिताके समान उसने सर्व वृत्तांत कह सुनाया और अपनी भार्या के कथनानुसार दण्ड ग्रहण किया (शेष जैसे चुलणीपिताके जीवन वृत्तांतमें लिखा गया है उसी तरह यहांभी कहना चाहिये अथवा समझ लेना चाहिये)। शब्दालपुत्र वहांसे काल करके अरुणभूत विमानमें देवता उत्पन्न हुआ यावत् देवलोकसे आयु पूर्ण करके महाविदेह क्षेत्रमें आगे सिद्ध होगा ॥ २३० ॥

॥ निक्खेवो ॥

॥ निक्षेपः ॥

सत्तमस्स अङ्गस्स उवासगदसाणं सत्तमं अज्झयणं समत्तं ॥

सप्तमाङ्ग उपासकदशाका सप्तम अध्ययन समाप्त हुआ ॥

अट्ठमं अज्झयणं ।

अष्टम अध्ययन

अट्ठमस्स उक्खेवो ॥

आठवें अध्ययनका वर्णन ॥

एवं खलु, जम्बू, तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे नयरे। गुणसिले चेइए। सेणिए राया ॥ २३१ ॥

हे जम्बू! उसकाल, उस समय एक राजगृह नामक नगर था। उसमें गुणशिल नामक एक उद्यान था। श्रेणिक राजा वहां राज्य करता था ॥ २३१ ॥

तत्थ णं रायगिहे महासयए नामं गाहावई परिवसइ अड्ढे जहा आणन्दो। नवरं अट्ठ हिरण्णकोडीओ सकंसाओ निहाणपउत्ताओ अट्ठ हिरण्णकोडीओ सकंसाओ वड्ढिपउत्ताओ अट्ठहिरण्णकोडीओ सकंसाओ पवित्थर पउत्ताओ अट्ठ वया दसगोसाहस्सिएणं वएणं ॥ २३२ ॥

उस राजगृह नगरमें महाशतक नामक गाथापति रहता था जो आनन्दके समान अति धनवान् था। इतना विशेष कि उसके पास आठ करोड़ स्वर्ण [1]संकांस्य निधान प्रयुक्त, आठ करोड़ स्वर्ण सकांस्य वृद्धि प्रयुक्त, आठ करोड़ स्वर्ण सकांस्य प्रविस्तर प्रयुक्त और (दशसहस्र गौका एक वर्ग) आठ वर्ग थे ॥ २३२ ॥

तस्स णं महासयगस्स रेवईपामोक्खाओ तेरस भारियाओ होत्था, अहीण जाव सुरूवाओ ॥ २३३ ॥

उस महाशत्तककी तेरह (१३) भार्या थीं जो सर्वाङ्ग

---

१ (एक सकांस्य ६४ पलका होता है)

पूर्ण यावत् परम सुन्दर वा सौन्दर्य्ययुक्त थीं जिनमें 'रेवती' मुख्य थी ॥ २३३ ॥

तस्सणं महासयगस्स रेवईए भारियाए कोलघरियाओ अट्ठ हिरण्णकोडीओ अट्ठवया दसगोसाहस्सिएणं वएणं होत्था। अवसेसाणं दुवालसण्हं भारियाणं कोलघरिया एगमेगा हिरण्णकोडी एगमेगे य वए दसगोसाहस्सिएणं वएणं होत्था ॥ २३४ ॥

उस महाशत्तककी रेवती नामिका भार्याके पास यौतुक (योगकाल अर्थात् विवाहके समय मिला हुआ धन) की आठ करोड़ स्वर्णमुद्रा और आठही वर्ग (दशसहस्र १०००० गौका एक वर्ग) थे। अन्य द्वादश (१२) पत्नियोंके पास यौतुककी एक एक करोड़ स्वर्ण मुद्रा और दस हज़ार गौका एक एक वर्ग था ॥ २३४ ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं सामी समोसढे। परिसा निग्गया। जहा आणन्दो तहा निग्गच्छइ। तहेव सावयधम्मं पडिवज्जइ। नवरं अट्ठ हिरण्णकोडीओ सकंसाओ उच्चारेइ, अट्ठ वया, रेवई पामोक्खाहिं तेरसेहिं भारियाहिं अवसेसं मेहुणविहिं पच्चक्खाइ। सेसं सव्वं तहेव। इमं च णं एयारूवं

अभिग्गहं अभिगिण्हइ। "कल्लाकल्लिं कप्पइ मे वेदोणि-याए कंसपाईए हिरणभरियाए संववहरित्तए" ॥२३५॥

उसकाल, उस समय श्रमण भगवान् महावीरजी पधारे नगरवासी दर्शनोंकी चेष्टा करते हुये समवसरणमें गये तब महाशत्तकभी आनन्दके समान सेवकोंसे वेष्टित हुआ २ भगवान्के समीप गया और उसने उसीप्रकारही श्रावकधर्मको अंगीकार किया इतना विशेष कि उसने आठ करोड़ सुवर्ण-सकांस्य और आठही वर्गोंका आगार रखा और रेवती आदि त्रयोदश स्त्रियोंके सिवाय शेष मैथुनविधिका प्रत्याख्यान अर्थात् त्याग किया शेष नियम सब उसी तरह किये पश्चात् यह अभिग्रह ग्रहण किया कि "मुझे प्रत्येक दिन दो द्रोण[1] सुवर्णसे भरे हुये कांस्य पात्रसे अधिक व्यापार करना नहीं कल्पता है" ॥ २३५ ॥

तएणं से महासयए समणोवासए जाय अभि-गय जीवाजीवे जाव विहरइ ॥ २३६ ॥

तब जीवाजीवज्ञ महाशतक श्रमणोपासक निर्ग्रन्थियोंको प्राशुक एषणीय अन्न तथा वस्त्रादि अनुप्रदान करता हुआ समय व्यतीत करने लगा ॥ २३६ ॥

---

१ एक द्रोण चौतीस सेर परिमाण होता है इसलिये दो द्रोण ६८ सेरके हुये इससे निश्चय हुया कि महाशत्तकने ६८ सेर सुवर्णसे अधिक सोनेसे व्यापार कर-नेका त्याग किया.

तएणं समणे भगवं महावीरे बहिया जणवय-विहारं विहरइ ॥ २३७ ॥

तब श्रमण भगवान् महावीरजी किसी अन्य देशको विहार कर गये ॥ २३७ ॥

तए णं तीसे रेवईए गाहावइणीए अन्नया कयाइ पुव्वरत्तावरत्तकाल समयंसि कुडुम्ब जाव इमेयारूवे अज्झत्थिए ४ । "एवं खलु अहं इमासिं दुवालसण्हं सवत्तीणं विघाएणं नो संचाएमि महासयएणं समणोवासएणं सद्धिं उरालाइं माणुस्सयाइं भोगभोगाइं भुञ्जमाणी विहरित्तए । तं सेयं खलु ममं एयाओ दुवालस वि सवत्तियाओ अग्गिप्पओगेणं वा सत्थप्पओगेणं वा विसप्पओगेणं वा जीवियाओ ववरोवित्ता, एयासिं एगमेगं हिरण्णकोडिं एगमेगं वयं सयमेव उवसम्पज्जित्ताणं महासयएणं समणोवासएणं सद्धिं उरालाइं जाव विहरित्तए" ॥ एवं सम्पेहेइ, २ त्ता तासिं दुवालसण्हं सवत्तीणं अन्तराणि य छिद्दाणि य विरहाणि य पडिजागरमाणी विहरइ ॥ २३८ ॥

तब अन्यदा अर्धरात्रिके समय कुटुम्बके विषयमें विचार करते हुये रेवती गृहपत्नीके मनमें इस रूपमें अध्यास्थित संकल्प उत्पन्न हुआ। "निश्चयसे अब मैं इन द्वादश सौतिनोंके कारण महाशत्तक श्रमणोपासकके साथ उदार वैवाहिक भोग नहीं भोग सक्ती इसलिये श्रेष्ठ हो यदि मैं इन द्वादश (१२) ही सौतिनोंको अग्नि, शस्त्र वा विषके प्रयोगसे जीवनसे विमुक्त कर दूं और इनकी सर्व संपत्ति अर्थात् एक एक करोड़ सुवर्ण मुद्रा और एक एक वर्गको छीनकर महाशत्तक श्रमणोपासकके साथ उदार भोग भोगती हुई विचरूं" । ऐसे विचारकर उन द्वादशही सौतिनोंको एकान्त अवस्थामें जीवनसे विमुक्त करनेके लिये अवसर तथा छिद्र सोचने लगी ॥ २३८ ॥

तए णं सा रेवई गाहावइणी अन्नया कयाइ तासिं दुवालसण्हं सवत्तीणं अन्तरं जाणित्ता छ सवत्तीओ सत्थप्पओगेणं उद्दवेइ, २ त्ता छ सवत्तीओ विसप्पओगेणं उद्दवेइ, २ त्ता तासिं दुवालसण्हं सवत्तीणं कोलघरियं एगमेगं हिरण्णकोडिं एगमेगं वयं सयमेव पडिवज्जइ, २ त्ता महासयएणं समणोवासएणं सद्धिं उरालाइं भोगभोगाइं भुञ्जमाणी विहरइ ॥ २३९ ॥

तब उस रेवती गृहपत्नीने अवकाश पाकर अन्यदा समय उन द्वादशही सौतिनों को मार दिया ६ सौतिनों को शस्त्र के प्रयोगसे और ६ सौतिनोंको विषके प्रयोगसे हनन करके उनकी एक एक करोड़ सुवर्णमुद्रा और एक एक वर्गको छीन लिया और पश्चात् महाशत्तक श्रमणोपासक के साथ उदार भोग भोगती हुई समय व्यतीत करने लगी ॥ २३९ ॥

तए णं सा रेवई गाहावइणी मंसलोलुया मंसेसु मुच्छिया अज्झोववन्ना बहुविहेहिं मंसेहि य सोल्लेहि य तलिएहि य भज्जिएहि य सुरं च महुं च मेरगं च मज्जं च सीधुं च पसन्नं च आसाएमाणी ४ विहरइ ॥ २४० ॥

तब मांसलम्पटा, मांसमूर्च्छिता और मांसाध्युपपन्ना रेवती गृहपत्नी बहुत प्रकारके तलित तथा भर्जित मांसशूल्यक और रस, मधु, मेरक, मद्य, सींधु, सुरादिका सेवन करने लगी ॥ २४० ॥

तए णं रायगिहे नयरे अन्नया कयाइ अमाघाए घुट्ठे यावि होत्था ॥ २४१ ॥

तब राजगृह नगरमें अन्यदा समय "किसी जीवको मत मारो" इसप्रकारकी राजाकी ओरसे उद्घोषणा करवाई गई ॥ २४१ ॥

तए णं सा रेवई गाहावइणी मंसलोलुया मंसेसु मुच्छिया ४ कोलघरिए पुरिसे सद्दावेइ, २ त्ता एवं वयासी। "तुब्भे, देवाणुप्पिया, मम कोलघरिएहिं-तो वएहिंतो कल्लाकल्लिं दुवे दुवे गोणपोयए उद्दवेह, २ त्ता ममं उवणेह" ॥ २४२ ॥

तब मांसलम्पटा मांसमूर्च्छिता रेवती गृहपत्नी कौल-गृहिक पुरुषोंको बुलाकर ऐसे बोली! "हे देवानुप्रियो! मेरे कौलगृहिक वर्गोंमेंसे तुम प्रत्येक दिवस दो पशुओंको मारकर मुझे अर्पण किया करो" ॥ २४२ ॥

तए णं ते कोलघरिया पुरिसा रेवईए गाहावइ-णीए "तह" त्ति एयमट्ठं विणएणं पडिसुणन्ति, २ त्ता रेवईए गाहावइणीए कोलघरिएहिंतो वएहिंतो कल्लाकल्लिं दुवे दुवे गोणपोयए वहेन्ति, २ त्ता रेवई-ए गाहावइणीए उवणेन्ति ॥ २४३ ॥

तब कौलगृहिक पुरुषोंने ("ऐसाही होगा" ऐसे बचन उच्चारण करके) रेवती गृहपत्नीकी आज्ञाको विनयसे श्रवण किया और फिर रेवती गृहपत्नीके कुलगृहके वर्गोंमेंसे नित्य-प्रति दो दो पशु वधकरके रेवती गृहपत्नीको अर्पण करने लगे ॥ २४३ ॥

तए णं सा रेवई गाहावइणी तेहिं गोणमंसेहिं सोल्लेहि य ४ सुरं च ६ आसाएमाणी ४ विहरइ २४४

तब वह रेवती गृहपत्नी उन पशुपुओंके मांसशूल्यक (इत्यादि) तथा रसादि को सेवन करती हुई रहने लगी ॥२४४॥

तए णं तस्स महासयगस्स समणोवासगस्स बहूहिं सील जाव भावेमाणस्स चोद्दस संवच्छरा वइक्कन्ता। एवं तहेव जेट्ठं पुत्तं ठवेइ जाव पोसहसालाए धम्मपणत्तिं उवसम्पज्जित्ताणं विहरइ ॥ २४५ ॥

तब बहुत शीलादि यावत् पालन करते हुये उस महाशत्तक श्रमणोपासकको चतुर्दश (१४) वर्ष व्यतीत हो गये। तदुपरान्त उसने उसी प्रकारही ज्येष्ठ पुत्रको गृहमें मुख्य स्थापन किया और स्वयं यावत् पाेषधशालामें जाकर गृहीतधर्मका पालन करता हुआ समय व्यतीत करने लगा ॥ २४५॥

तए णं सा रेवई गाहावइणी मत्ता लुलिया विइणकेसी उत्तरिज्जयं विकड्ढमाणी २ जेणेव पोसहसाला जेणेव महासयए समणोवासए तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता मोहुम्माय जणणाइं सिङ्गरिहाइं इत्थिभावाइं उवदंसेमाणी २ महासययं समणोवासयं एवं वयासी। "हं भो महासयया समणोवासया,

धम्मकामया पुण्णकामया सग्गकामया मोक्खकामया धम्मकङ्खिया ४ धम्मपिवासिया ४, किण्णं तुब्भं, देवाणुप्पिया, धम्मेण वा पुण्णेण वा सग्गेण वा मोक्खेण वा, जण्णं तुमं मए सद्धिं उरालाइं जाव भुञ्जमाणे नो विहरसि" ? ॥ २४६ ॥

तब कामके वश हुई २ वह रेवती गृहपत्नी अपने केशोंको बखेरकर उत्तरीय(वस्त्र)को उतारकर जहां पोषधशाला थी वहां महाशत्तक श्रमणोपासकके पास गई और मोह तथा उन्माद (कामभोग) वर्धक शृङ्गाररूपी स्त्रीभावोंको दिखाती हुई महाशत्तक श्रमणोपासकको ऐसे बोली । भो महाशत्तक श्रमणोपासक! धर्म पुण्य स्वर्ग मोक्षेच्छुक! धर्म कांक्षक ४! धर्मपिपासु ४! यदि तूं मेरे साथ उदार विषयरूपी सुख नहीं भोगता है तो तुझे, हे देवानुप्रिय! धर्म पुण्य स्वर्ग मोक्षसे क्या लाभ होगा? ॥ २४६ ॥

तएणं से महासयए समणोवासए रेवईए गाहावइणीए एयमट्ठं नो आढाइ नो परियाणाइ, अणाढायमाणे अपरियाणमाणे तुसिणीए धम्मज्झाणोवगए विहरइ ॥ २४७ ॥

तब उस महाशत्तक श्रमणोपासकने रेवती गृहपत्नीकी इस

बातपर किंचित् ध्यान न दिया और ना ही उसका आदर किया किन्तु मौन वृत्ति धारण की अपितु धर्म ध्यानमें अधिक प्रवृत्ति की ॥ २४७ ॥

तएणं सा रेवई गाहावइणी महासययं समणोवासयं दोच्चं पि तच्चं पि एवं वयासी । "हं भो" तं चेव भणइ, सो वि तहेव जाव अणाढायमाणे अपरियाणमाणे विहरइ ॥ २४८ ॥

तब वह रेवती गृहपत्नी महाशत्तक श्रमणोपासकको दो तीनवार फिर ऐसे बोली । हे महाशत्तक श्रमणोपासक.... ....! यदि तू मेरे साथ उदार भोग नहीं भोगता है तो, हे देवानुप्रिय! तुझे धर्म पुण्य स्वर्ग मोक्षसे क्या लाभ होगा? तब महाशत्तकने इस बात पर किंचित् ध्यान नहीं दिया किन्तु धर्म ध्यानमें अधिक प्रवृत्त हुआ ॥ २४८ ॥

तएणं सा रेवई गाहावइणी महासयएणं समणोवासएणं अणाढाइज्जमाणी अपरियाणिज्जमाणी जामेव दिसं पाउब्भूया तामेव दिसं पडिगया ॥२४९॥

तब वह रेवती गृहपत्नी महाशत्तक श्रमणोपासकसे निरादर वा अवज्ञाको प्राप्त हुई २ जिस दिशासे प्रगट हुई थी उसी दिशाको चली गई ॥ २४९ ॥

तएणं से महासयए समणोवासए पढमं उवा-

सग पडिमं उवसम्पज्जित्ताणं विहरइ । पढमं अहा-सुत्तं जाव एक्कारस वि ॥ २५० ॥

तब वह महाशत्तक श्रमणोपासक उपासककी प्रथम प्रतिज्ञाको पालता हुआ विचरने लगा । फिर एकादश (११) ही प्रतिज्ञाओंकी यथासूत्र यावत् आराधना की ॥ २५० ॥

तएणं से महासयए समणोवासए तेणं उरालेणं जाव किसे धमणिसन्तए जाए ॥ २५१ ॥

तब वह महाशत्तक श्रमणोपासक उस उदार तपसे यावत् धूमनिके सदृश शुष्क होगया ॥ २५१ ॥

तएणं तस्स महासययस्स समणोवासयस्स अन्नया कयाइ पुव्वरत्तावरत्तकाले धम्मजागरियं जागरमाणस्स अयं अज्झत्थिए ४ । "एवं खलु अहं इमेणं उरालेणं जहा आणन्दो तहेव अपच्छिममारणन्तियसंलेहणाए झूसियसरीरे भत्तपाणपडियाइक्खिए कालं अणवकङ्खमाणे विहरइ ॥ २५२ ॥

तब उस महाशत्तक श्रमणोपासकके मनमें अर्धरात्रिके समय धर्मपर विचार करते हुये यह अध्यास्थित संकल्प उत्पन्न हुआ । "निश्चयसे मैं अब इस उदार तपसे धूमनिके

समान सूक गया हूं यावत् इसलिये श्रेष्ठ हो यदि मैं कल्ल अनशन व्रत धारण करके कालकी इच्छा रहित विचरूं" ॥ ऐसा विचार कर वह द्वितीय दिवस सर्व प्रकारके अन्नपानका त्याग करके अपश्चिम मारणान्तिक अनशन व्रत धारण करके कालकी इच्छासे रहित होकर विचरने लगा ॥ २५२ ॥

तएणं तस्स महासयगस्स समणोवासगस्स सुभेणं अज्झवसाणेणं जाव खओवसमेणं ओहिणाणे समुप्पन्ने। पुरत्थिमेणं लवणसमुद्दे जोयणसाहस्सियं खेत्तं जाणइ पासइ, एवं दक्खिणेणं पच्चत्थिमेणं, उत्तरेणं जाव चुल्लहिमवन्तं वासहरपव्वयं जाणइ पासइ, अहे इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए लोलुयच्चुयं नरयं चउरासीइवाससहस्सट्ठिइयं जाणइ पासइ ॥ २५३ ॥

तब उस महाशत्तक श्रमणोपासकको शुभ अध्यवसान होनेके कारण यावत् ज्ञानके विरोधक कर्मोंके क्षयोपशमक होनेसे अवधि ज्ञान प्राप्त हुआ जिसके बलसे उसने पूर्वदिशामें लवणसमुद्र और सहस्र योजन क्षेत्र जाना और देखा, इसी प्रकार दक्षिण और पश्चिम दिशामें जाना और देखा। उत्तर दिशामें यावत् लघु हिमालय (हैमवंत) वासधर पर्वतको जाना

और देखा, अधोदिशामें रत्नप्रभा पृथ्वीमें लोलुपाच्युत नरकको जाना और देखा जिसमें चउरासी हजार ८४००० वर्षकी स्थिति है ॥ २५३ ॥

तएणं सा रेवई गाहावइणी अन्नया कयाइ मत्ता जाव उत्तरिज्जयं विकड्ढमाणी २ जेणेव महासयए समणोवासए जेणेव पोसहसाला तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता महासययं तहेव भणइ जाव दोच्चं पि तच्चं पि एवं वयासी । "हं भो" तहेव ॥ २५४ ॥

तब वह मत्ता रेवती गृहपत्नी अन्यदा समय (यावत्) उत्तरीय (दुपट्टा) को शीर्षसे उतारकर जहां महाशत्तक श्रमणोपासक था जहां पोषधशाला थी वहां गई और महाशत्तकको उसीप्रकार सम्बोधन करके ऐसी बोली । हे महाशत्तक.................! (यदि तूं मेरे साथ भोग नहीं भोगता है तो, हे देवानुप्रिय! तुझे धर्म पुण्य स्वर्ग मोक्षसे क्या लाभ होगा? तब महाशत्तकने किंचित् मात्रभी ध्यान न दिया फिर रेवतीने दो तीन वार ऐसेही कहा । हे महाशत्तक...............! यदि तूं मेरे साथ उदार भोग नहीं भोगता है तो, हे देवानुप्रिय! तुझे धर्म पुण्य स्वर्ग मोक्षसे क्या लाभ होगा? फिरभी महाशत्तकने बिलकुल ध्यान न दिया और कुछ सत्कार नहीं किया किन्तु मौन वृत्ति धारण

की अपितु वह महाशत्तक धर्म ध्यानमें अधिक प्रवृत्त हुआ) ॥ २५४ ॥

तएणं से महासयए समणोवासए रेवईए गाहावइणीए दोच्चं पि तच्चं पि एवं वुत्ते समाणे आसुरत्ते ४ ओहिं पउञ्जइ, २ त्ता ओहिणा आभोएइ, २ त्ता रेवइं गाहावइणिं एवं वयासी । "हं भो रेवई, अपत्थियपत्थिए ४, एवं खलु तुमं अन्तो सत्तरत्तस्स अलसएणं वाहिणा अभिभूया समाणी अट्टदुहट्टवसट्टा असमाहिपत्ता कालमासे कालं किच्चा अहे इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए लोलुयच्चुए नरए चउरासीइवाससहस्सट्ठिइएसु नेरइएसु नेरइयत्ताए उववज्जिहिसि" ॥ २५५ ॥

तब उस महाशत्तक श्रमणोपासकने रेवती गृहपत्नीसे दो तीनवार ऐसा कहा जानेपर क्रोधयुक्त होकर (४) अवधि ज्ञानका प्रयोग किया और अवधि ज्ञानसे (रेवतीकी भविष्य दशाका) निश्चय करके रेवती गृहपत्नीको ऐसे बोला । हे अप्रार्थित..................रेवती ! निश्चयसे तू सप्त (७) रात्रिके मध्यमें अलसक व्याधिसे पीड़ित होकर आर्त्त और दुःखोंके वश होकर विना समाधि (ध्यान) के प्राप्त किये ही

अवसरपर मृत्यु पाकर रत्नप्रभामें लोलुपाच्युत नामक नरकमें नैरयिकोंके मध्यमें उत्पन्न होवेगी जहा चउरासी हजार ८४००० वर्षकी स्थिति है ॥ २५५ ॥

तएणं सा रेवई गाहावइणी महासयएणं समणोवासएणं एवं वुत्ता समाणी एवं वयासी । "रुट्ठे णं ममं महासयए समणोवासए, हीणे णं ममं महासयए समणोवासए, अवज्झाया णं अहं महासयएणं समणोवासएणं, न नज्जइ णं, अहं केण विकुमारेणं मारिज्जिस्सामि" त्ति कट्टु भीया तत्था तसिया उव्विग्गा सञ्जायभया सणियं २ पच्चोसक्कइ, २ त्ता जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता ओहय जाव झियाइ ॥ २५६ ॥

तब रेवती गृहपत्नी महाशत्तक श्रमणोपासकसे ऐसा कहा जानेपर (अपने आपको) ऐसे बोली । "महाशत्तक श्रमणोपासक मेरेपर रुष्ट होगया है, महाशत्तक श्रमणोपासक ने अब प्रीतिको छोड़ दिया है, महाशत्तक श्रमणोपासकने मेरा अपमान किया है । यह मालूम नहीं कि मैं किस दुःखसे मरूंगी" फिर भय त्रास वा उद्वेग (व्याकुलता) से युक्त होकर शनैः शनैः बाहर निकलकर जहां अपना घर था वहां गई और वहां पहुंचकर उसने अवहत(आर्त्त) यावत् ध्यान लगाया ॥२५६॥

तएणं सा रेवई गाहावइणी अन्तो सत्तरत्तस्स अलसएणं वाहिणा अभिभूया अट्टदुहट्टवसट्टा कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए लोलुयच्चुए नरए चउरासीइवाससहस्सट्ठिइएसु नेरइएसु नेरइयत्ताए उववन्ना ॥ २५७ ॥

तब वह रेवती गृहपत्नी सात रात्रिके मध्यमें अलसक व्याधिसे पीड़ित हुई २ आर्त्त और दुःखोंके बशीभूत होकर अपने अवसर पर काल करके रत्नप्रभामें लोलुपाच्युत नरकमें नैरयिकोंके बीचमें उत्पन्न हुई ॥ २५७ ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे समोसरणं जाव परिसा पडिगया ॥ २५८ ॥

उसकाल उस समय श्रमण भगवान् महावीरजी पधारे नागरिक पुरुष समवसरणमें दर्शनार्थ गये यावत् कथा व्याख्यान सुनकर वापिस चले गये ॥ २५८ ॥

"गोयमा" इ समणे भगवं महावीरे एवं वयासी। "एवं खलु, गोयमा, इहेव रायगिहे नयरे ममं अन्तेवासी महासयए नामं समणोवासए पोसहसालाए अपच्छिम मारणान्तियसंलेहणाए झूसियसरीरे भत्तपाणपडियाइक्खिए कालं अणवकङ्खमाणे

विहरइ । तएणं तस्स महासयगस्स रेवई गाहाव-
इणी मत्ता जाव विकड्ढमाणी २ जेणेव पोसहसाला,
जेणेव महासयए तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता मोहु-
म्माय जाव एवं वयासी तहेव जाव दोच्चं पि तच्चं पि
एवं वयासी । तएणं से महासयए समणोवासए
रेवईए गाहावइणीए दोच्चं पि तच्चं पि एवं वुत्ते समाणे
आसुरत्ते ४ ओहिं पउञ्जइ, २ त्ता ओहिणा आभो-
एइ, २ त्ता रेवइं गाहावइणिं एवं वयासी । जाव
" "उववज्जिहिसि" " । नो खलु कप्पइ, गोयमा,
समणोवासगस्स अपच्छिम जाव झूसियसरीरस्स
भत्तपाणपडियाइक्खियस्स परो सन्तेहिं, तच्चेहिं
तहिएहिं सब्भूएहिं अणिट्ठेहिं अकन्तेहिं अप्पिएहिं
अमणुणेहिं अमणामेहिं वागरणेहिं वागरित्तए ।
तं गच्छ णं, देवाणुप्पिया, तुमं महासययं समणो-
वासयं एवं वयाहि । " "नो खलु, देवाणुप्पिया,
कप्पइ समणोवासगस्स अपच्छिम जाव भत्तपाण-
पडियाइक्खियस्स परो सन्तेहिं जाव वागरित्तए ।
तुमे य णं, देवाणुप्पिया, रेवई गाहावइणी सन्तेहिं

४ अणिट्ठेहिं, ५ वागरणेहिं वागरिया । तं णं तुमं एयस्स ठाणस्स आलोएहि जाव जहारिहं च पायच्छित्तं पडिवज्जाहि" " " ॥ २५९ ॥

गौतमजीको श्रमण भगवान् महावीरजी ऐसे बोले । हे गौतम! निश्चयसे इस राजगृह नगरमें मेरा अन्तेवासी महाशत्तक नामक श्रमणोपासक पोषधशालामें अपश्चिम मारणान्तिक अनशन व्रत धारण करके कालकी कांक्षासे रहित विचरता है (एकदा) उस महाशत्तककी रेवती गृहपत्नी कामके वशीभूत होकर, यावत् उत्तरीय (दुपट्टा) को शिरसे उतारकर जहां पोषधशाला और जहां महाशत्तक था वहां जाकर मोह तथा उन्माद वर्धक यावत् स्त्रीभावोंको दिखाती हुई महाशत्तक श्रमणोपासकको ऐसे बोली । हे महाशत्तक...... ......! यदि तू मेरे साथ भोग भोगता हुआ नहीं विचरता है तो, हे देवानुप्रिय! तुझे धर्म पुण्य स्वर्ग मोक्षसे क्या लाभ होगा? यावत् दो तीनवार फिर वैसेही कहा । तब महाशत्तक श्रमणोपासकने रेवती गृहपत्नीसे दो तीनवार ऐसा कहा जाने पर आशुरक्त (क्रुद्धित) होकर अवधि ज्ञानका प्रयोग किया और ज्ञानद्वारा रेवतीकी भविष्यत् दशाको जानकर ऐसे कहा । "हे रेवती...............! तू यावत् सात दिनके अन्दर काल करके यावत् लोलुपाच्युत नरकमें उत्पन्न

होगी"। हे गौतम! अनशन व्रत धारण किये हुये श्रमणोपासकको अनिष्ट, अकांत और अप्रिय बचनोंका भाषण करना उचित नहीं है चाहे वह सत्य, यथार्थ वा सद्भूतही क्यों न हों इसलिये, हे देवानुप्रिय! तू जा और महाशत्तक श्रमणोपासकको इस तरह कह। "हे देवानुप्रिय! अनशन व्रत धारण किये हुये श्रमणोपासकको अप्रिय यावत् बचनोंका भाषण करना उचित नहीं है चाहे वह सत्य वा सद्भूतही क्यों न हों परन्तु, हे देवानुप्रिय! तुमने रेवती गृहपत्नीको अनिष्ट वा अप्रिय बचन कहे हैं चाहे वह सत्य, तथ्य वा सद्भूतही थे इसलिये तू उस स्थानकी आलोचना कर यावत् यथायोग्य प्रायश्चित्त ग्रहण कर" " " ॥ २५९॥

तएणं से भगवं गोयमे समणस्स भगवओ महावीरस्स "तह" त्ति एयमट्ठं विणएणं पडिसुणेइ, २ त्ता तओ पडिणिक्खमइ, २ त्ता रायगिहं नयरं मज्झं मज्झेणं अणुप्पविसइ, २ त्ता जेणेव महासयगस्स समणोवासयस्स गिहे जेणेव महासयए समणोवासए तेणेव उवागच्छइ ॥ २६० ॥

तब भगवान् गौतमजी ("तथास्तु" तह–त्ति–तथा इति ऐसा शब्द उच्चारण करके) श्रमण भगवान् महावीरजीकी इस

बातको विनयसे सुनकर वहांसे निकले और राजगृह नगरके मध्यसे चलकर महाशत्तक श्रमणोपासकके पास उसके गृहमें गये ॥ २६० ॥

तएणं से महासयए समणोवासए भगवं गोयमं एज्जमाणं पासइ, २ त्ता हट्ठ जाव हियए भगवं गोयमं वन्दइ नमंसइ ॥ २६१ ॥

तब महाशत्तक श्रमणोपासकने भगवान् गौतमजीको आते हुये देखकर हृदयमें प्रसन्न होकर (यावत्) भगवान् गौतमजीको वंदना नमस्कारकी ॥ २६१ ॥

तएणं से भगवं गोयमे महासययं समणोवासयं एवं वयासी । "एवं खलु, देवाणुप्पिया, समणे भगवं महावीरे एवमाइक्खइ भासइ पराणवेइ परूवेइ । " "नो खलु कप्पइ, देवाणुप्पिया, समणोवासगस्स अपच्छिम जाव वागरित्तए" " । तुमे णं, देवाणुप्पिया, रेवई गाहावइणी सन्तेहिं जाव वागरिया । तं णं तुमं, देवाणुप्पिया, एयस्स ठाणस्स आलोएहि जाव पडिवज्जाहि" ॥ २६२ ॥

तब भगवान् गौतमजी महाशत्तक श्रमणोपासकको ऐसे बोले । "हे देवानुप्रिय! निश्चय करके श्रमणभगवान् महा-

वीरजीने ऐसे भाषण, प्रतिपादन वा प्ररूपण किया है। ,,
"हे देवानुप्रिय! अनशन व्रत धारण किये हुए श्रमणोपासको अप्रिय, यावत् बचन भाषण करने उचित नहीं हैं चाहे वह सत्य वा सद्भूतही क्यों न हों" "। परन्तु हे देवानुप्रिय! तूने रेवती गृहपत्नीको अप्रिय यावत् शब्द कहे हैं चाहे वह सत्य यावत् सद्भूतही थे इसलिये हे देवानुप्रिये! तू इस स्थानकी आलोचना कर यावत् दण्ड ग्रहण कर ॥ २६२॥

तएणं से महासयए समणोवासए भगवओ गोयमस्स "तह" त्ति एयमट्ठं विणएणं पडिसुणेइ, २ त्ता तस्स ठाणस्स आलोएइ जाव अहारिहं च पायच्छित्तं पडिवज्जइ ॥ २६३ ॥

तब महाशत्तक श्रमणोपासकने भगवान् गौतमजीकी ("तथास्तु" ऐसा बचन कहकर) इस बातको विनयसे सुनकर उस स्थानकी आलोचनाकी यावत् यथायोग्य प्रायश्चित्त ग्रहण किया ॥ २६३ ॥

तएणं से भगवं गोयमे महासयगस्स समणोवासयस्स अन्तियाओ पडिणिक्खमइ, २ त्ता रायगिहं नगरं मज्झं मज्झेणं निग्गच्छइ, २ त्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता समणं

भगवं महावीरं वन्दइ नमंसइ, २ त्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ ॥ २६४ ॥

तब भगवान् गौतमजी महाशत्तक श्रमणोपासकके पाससे निकलकर, राजगृह नगरके मध्यसे जाते हुये जहां श्रमण भगवान् महावीरजी थे वहां गये, पश्चात् श्रमण भगवान् महावीरजीको बन्दना नमस्कार करके, संयम और तपसे अपना कल्याण करते हुये विचरने लगे ॥ २६४ ॥

तएणं समणे भगवं महावीरे अन्नया कयाइ रायगिहाओ नयराओ पडिणिक्खमइ, २ ता बहिया जणवय विहारं विहरइ ॥ २६५ ॥

तब श्रमण भगवान् महावीरजी राजगृह नगरसे निकलकर अन्यदा समय किसी अन्य देशको विहार कर गये ॥२६५॥

तएणं से महासयए समणोवासए बहूहिं सील जाव भावेत्ता वीसं वासाइं समणोवासग परियायं पाउणित्ता एक्कारस उवासगपडिमाओ सम्मं काएण फासित्ता मासियाए संलेहणाए अप्पाणं भूसित्ता सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदेत्ता आलोइय पडिक्कन्ते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा सोहम्मे कप्पे

अरुणावडिंसए विमाणे देवत्ताए उववन्ने । चत्तारि पलिओवमाइं ठिई । महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ ॥ २६६ ॥

तब उस महाशत्तक श्रमणोपासकने बहुत शीलव्रत (यावत्) से अपना कल्याण किया, २० वर्षतक श्रमणोपासकके धर्मको पाला उपासककी एकादशही प्रतिज्ञाओंको सम्यक् प्रकारसे काया से आराधन किया एक मासतक संलेखनाकी जूषणाको जूषित करके, और अनशन व्रत धारण करके आलोचनाकी और प्रतिक्रमण किया, तब समाधि प्राप्त करके, अवसरपर मृत्युको प्राप्त होकर सौधर्म्म कल्पमें अरुणावतंसक विमानमें देवता उत्पन्न हुआ जहां चार पल्योपमकी स्थिति है। देवलोकसे आयु, भव और स्थिति क्षय करके यह महाविदेह क्षेत्रमें सिद्ध होगा ॥ २६६ ॥

॥ निक्खेवो ॥

निक्षेपः ।

सत्तमस्स अङ्गस्स उवासगदसाणं अट्ठमं अज्झयणं समत्तं ॥

सप्तमाङ्ग उपासकदशाका अष्टम अध्ययन समाप्त हुआ ॥

नवमं अज्झयणं ॥

॥ नवम (९ वां) अध्ययन ॥

॥ नवमस्स उक्खेवो ॥

॥ नवम अध्ययनका उत्क्षेप ॥

एवं खलु, जम्बू, तेणं कालेणं तेणं समएणं सावत्थी नयरी। कोट्ठए चेइए। जियसत्तू राया॥२६७॥

हे जम्बू! उसकाल उससमय श्रावस्ती नामिका एक नगरी थी उसके निकट कोष्टक उद्यान था। जितशत्रु राजा वहां राज्य करता था॥ २६७॥

तत्थणं सावत्थीए नयरीए नन्दिणीपिया नामं गाहावई परिवसइ अड्ढे। चत्तारि हिरण्णकोडीओ निहाणपउत्ताओ चत्तारि हिरण्णकोडीओ वड्ढिपउत्ताओ चत्तारि हिरण्णकोडीओ पवित्थर पउत्ताओ चत्तारि वया दसगोसाहस्सिएणं वएणं। अस्सिणी भारिया॥ २६८॥

उस श्रावस्ती नगरीमें नन्दिनी पिता नामक एक गाथापति रहता था जो अपनी जातिमें अति धनवान् था। चार करोड़ स्वर्णमुद्रा निधानप्रयुक्त, चार करोड़ स्वर्ण मुद्रा वृद्धि-

प्रयुक्त, चार करोड़ स्वर्ण मुद्रा प्रविस्तर प्रयुक्त और (दश सहस्र गायके एक वर्ग जैसे) चार वर्ग उसके पास थे। अश्विनी नामा उसकी भार्या थी ॥ २६८ ॥

सामी समोसढे। जहा आणन्दो तहेव गिहिधम्मं पडिवज्जइ। सामी बहिया विहरइ ॥ २६९ ॥

उससमय श्रमण भगवान् महावीरजी पधारे तब नन्दिनी-पिताने आनन्द सुश्रावकके समान उसीप्रकारही गृहस्थधर्म-को अङ्गीकार किया कुछ कालके पश्चात् भगवान् अन्य देश-को विहार कर गये ॥ २६९ ॥

तएणं से नन्दिणीपिया समणोवासए जाए जाव विहरइ ॥ २७० ॥

तब जीवाजीवज्ञ नन्दिनीपिता श्रमणोपासक यावत् मुनियोंको प्राशुक एषणीय पदार्थ (अन्न, वस्त्र, भाजन, पात्रादि) प्रदान करता हुआ विचरने लगा ॥ २७० ॥

तएणं तस्स नन्दिणीपियस्स समणोवासयस्स बहूहिं सीलव्वयगुण जाव भावेमाणस्स चोद्दस संवच्छराइं वइक्कन्ताइं। तहेव जेट्ठं पुत्तं ठवेइ। धम्मपण्णत्तिं। वीसं वासाइं परियागं। नाणत्तं अरुणगवे विमाणे उववाओ। महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ ॥ २७१ ॥

तब नन्दिनीपिता श्रमणोपासकको शीलव्रत और गुणव्रत यावत् पालन करते हुये चतुर्दश (१४) वर्ष व्यतीत हो गये। उसने उसीतरह अपने ज्येष्ठ पुत्रको अपने घरमें मुख्य स्थापित किया। और स्वयं ग्रहण किये हुये धर्म्मको पालता हुआ विचरने लगा। वीस वर्षतक उसने श्रावककी पर्यायको पाला यावत् अरुणगवविमानमें देवता उत्पन्न हुआ। देवलोकसे आयु क्षय करके महाविदेह क्षेत्रमें सिद्ध होगा॥ २७१॥

॥ निक्खेवो ॥

॥ निक्षेपः ॥

उवासगदसाणं नवमं अज्झयणं समत्तं ॥

उपासक दशाका नवम अध्ययन समाप्त हुआ ॥

॥ दसमं अज्झयणं ॥

(दशम अध्ययन)

॥ दसमस्स उक्खेवो ॥

दशम अध्ययनका उत्क्षेप ॥

एवं खलु, जम्बू, तेणं कालेणं तेणं समएणं सावत्थी नयरी। कोट्ठए चेइए। जियसत्तू राया ॥२७२॥

हे जम्बू! निश्चयसे उसकाल उससमय श्रावस्ती नगरी थी।

(उसके पास) कोष्ठक उद्यान था । जितशत्रु वहांका अधिपति था ॥ २७२ ॥

तत्थणं सावत्थीए नयरीए सालिहीपिया नामं गाहावई परिवसइ अड्ढे दित्ते । चत्तारि हिरण्णकोडीओ निहाण पउत्ताओ चत्तारि हिरण्णकोडीओ वड्ढि पउत्ताओ चत्तारि हिरण्णकोडीओ पवित्थर पउत्ताओ चत्तारि वया दसगोसाहस्सिएणं वएणं । फग्गुणी भारिया ॥ २७३ ॥

उस श्रावस्ती नगरीमें सालिहीपिता नामक गृहपती रहता था जो अपनी जातिमें महाधनी वा धनधान्य युक्त था । चार करोड़ स्वर्ण मुद्रा निधान प्रयुक्त, चार करोड़ स्वर्ण मुद्रा वृद्धि प्रयुक्त, चार करोड़ स्वर्ण मुद्रा प्रविस्तर प्रयुक्त और (दशसहस्र गौका एक वर्ग ऐसे) चार वर्ग उसके पास थे । उसकी प्रियाका नाम फल्गुनी था ॥ २७३ ॥

सामी समोसढे । जहा आणन्दो तहेव गिहिधम्मं पडिवज्जइ । जहा कामदेवो तहा जेट्ठं पुत्तं ठवेत्ता पोसहसालाए समणस्स भगवओ महावीरस्स धम्मपण्णत्तिं उवसम्पज्जित्ताणं विहरइ । नवरं निरुवसग्गाओ एक्कारस वि उवासगपडिमाओ तहेव भाणि-

यव्वाओ। एवं कामदेवगमेणं नेयव्वं जाव सोहम्मे कप्पे अरुणकीले विमाणे देवत्ताए उववन्ने। चत्तारि पलिओवमाइं ठिई। महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ ॥ २७४ ॥

वहां स्वामीजी पधारे। सालिहीपिताने आनन्दके समान उसीप्रकारही गृहस्थधर्मको अंगीकार किया। कामदेव श्रमणोपासकके समान ज्येष्ठपुत्रको गृहमें मुख्य स्थापित करके पोषधशालामें श्रमण भगवान् महावीरजीके पास ग्रहण किये हुये धर्म्मको पालता हुआ विचरने लगा। इतना विशेष कि उसको कोई उपसर्ग नहीं हुआ एकादशही उपासककी प्रतिज्ञाओंको सम्यक् प्रकारसे कायासे पाला (उसीप्रकार आगे कहना चाहिये)। ऐसेही कामदेवके समान (श्रावककी पर्यायको पाला यावत् मृत्यु पाकर) सौधर्मकल्पमें अरुणकील विमानमें देवता उत्पन्न हुआ। वहां चार पल्योपमकी स्थिति है। (देवलोकसे च्युतहोकर) महाविदेहक्षेत्रमें सिद्ध होगा ॥ २७४ ॥

दसण्ह वि पण्णरसमे संवच्छरे वट्टमाणाणं चिन्ता। दसण्ह वि वीसं वासाइं समणोवासय परियाओ ॥ २७५ ॥

दशही श्रावकोंको पंद्रहवें वर्षके मध्यमें धर्मका विचार उत्पन्न हुआ। दशही श्रावकोंने वीस वर्षतक श्रमणोपासककी पर्यायको पाला ॥ २७५ ॥

एवं खलु, जम्बू, समणेणं जाव सम्पत्तेणं सत्तमस्स अङ्गस्स उवासगदसाणं दसमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पणत्ते ॥ २७६ ॥

हे जम्बू! निश्चयसे मोक्षगत भगवान् महावीरजीने सप्तम अङ्ग उपासक दशाके दशम अध्ययनके यह अर्थ कहे हैं॥२७६॥

॥ उवासगदसाओ समत्ताओ ॥

॥ उपासकदशा समाप्त हुआ ॥

ज्ञानदीपिका

अर्थात्

जैनोद्योत

इस ग्रन्थमें स्वमत, परमत तथा देवगुरु धर्म का कथन और चतुर्गतिरूप संसार का अनित्य स्वरूपादिक उपदेश हैं और दया क्षमा आदि ग्रहणरूप शिक्षायें हैं.

इस पुस्तक के दो भाग हैं प्रथम भागमें मुनि आत्मारामजी संवेगी रचित जैन तत्वादर्श ग्रन्थमें जो २ शास्त्रों से विरुद्ध अर्थात् सूत्रों से अनमिलत कथन हैं उनका सम्यक् प्रकार से अकाट्य युक्तियों द्वारा खण्डन किया गया है द्वितीय भाग में जैनधर्म अर्थात् क्षमा दयारूप जो सत्य धर्म है उसकी पुष्टता है इस भाग के पढने से स्वमत और परमत का बहुत अच्छा बोध हो जाता है यह आवृत्ति खतम होनेपर कागजकी तेजीके कारण ग्रन्थ मिलना दुर्लभ हो जावेगा यह पुस्तक उत्तम विलायती कागज पर सुन्दर मोटे अक्षरों में छपी हुई है सुन्दर कपडे की जिल्द बंधी हुई है पृष्ठ भी ३१५ हैं. मूल्य केवल ।।।) है.

सत्यार्थचन्द्रोदय

इस पुस्तक में प्राचीन जैनधर्म (आत्माभ्यासी स्थानकवासी मतका) यथोक्तरूपसे सूत्रोंद्वारा केवल सविस्तर वर्णनही नहीं किया वरंच सूत्र प्रमाण, कथा उदाहरण तथा युक्ति आदिसे सर्व साधारण के हस्तामलक कराने में किंचित् त्रुटि नहीं की वरंच निक्षेपमूर्ति, भाव-निक्षेप, मूर्तिपूजननिषेध, चेइय शब्द वर्णन साधु साध्वियों के शास्त्रोक्त आचरण वा लक्षण वर्णन करने के अतिरिक्त प्रश्नोत्तर की रीतिपर पूर्णरूपसे श्वेताम्बराम्नाय, पीताम्बर धारियों के नवीनमार्ग का मूल सूत्रों, माननीय जैन ऋषियों के मन्तव्यों तथा प्रबल युक्तियोंसे खण्डन किया है और युक्तियें भी ऐसी प्रबल दी हैं कि जिनको जैन-

धर्म्मारूढ नवीन मतावलम्बियों के सिवाय अन्य सांप्रदायिक भी खंडन नहीं कर सक्के वरंच बडे २ विद्वानों ने भी श्लाघा की है इस-पुस्तक में विशेष करके श्रीआत्मारामजी संवेगी कृत जैनमार्गप्रदर्शक नवीन कपोल कल्पित ग्रन्थों की पूर्ण आन्दोलना की है अधिक क्या लिखें इस पुस्तक में मूर्तिपूजा का बडी २ अकाट्य युक्तीयों के द्वारा खूब अच्छी तरह खण्डन किया गया है सर्व जनों को उचित है कि इसको पढकर सत्यासत्य का निर्णय करें यह पुस्तक मोटे कागज पर मोटे अक्षरों में छपकर तय्यार हुआ हैं पृ. २२८ हैं विलायती कपडे जिल्द सहितदाम ॥।) मात्र है.

पद्मचन्द्रकोष.

अर्थात्

व्युत्पत्तिविषयसहित संस्कृत–भाषाकोष.

द्वितीयावृत्ति.

इसमें २० हजार संस्कृत शब्द प्रकृतिप्रत्ययसहित भाषा में वर्णन है जिसको

श्रीमान् पंडित गणेशदत्त शास्त्री प्रोफेसर

ओरियंटल कालिज लाहोर ने निर्माण किया है

यह पुस्तक जगत् प्रसिद्ध निर्णयसागर मुम्बई छापेखाने में अतिउ-त्तम कागज पर छपा है, और गवर्नमेण्ट ने इस कोष की बडी २ प्रसिद्ध लाईब्रेरियों और कालिजों में एक २ कापी खरीद कर रक्खी हैं।

इस कोष पर बडे २ युरोप और भारत के प्रसिद्ध विद्वानों ने भी सर्वोत्तम सम्मतियें दी हैं, मूल्य केवल ३) मात्र हैं महसूल डाक ।=)

प्राकृतव्याकरण.

इंग्लण्डीय भाषानुवाद सहित श्रीहृषीकेश भट्टाचार्य संकलित

मूल्य १॥)

श्री भगवान् वर्द्धमान (महावीर)
स्वामी जी महाराजका
सरल हिन्दी भाषामें
जीवनचरित्र

प्रत्येक जैनी को अपने पास रखना चाहिये

इस पुस्तक को (पंजाबी) श्री श्री श्री १००८ उपाध्याय आत्माराम जी महाराज के शिष्य (स्वर्गवासी) जैन मुनि पं० ज्ञानचन्द्र जी महाराज ने अति परिश्रम से तय्यार किया है।

प्रिय पाठक गण ! यद्यपि इस संसार में मनुष्य मात्र को अपना सदाचार पालन और तत्वज्ञान की प्राप्ति के लिये सत्संग और सच्छास्त्र रूप दोही मुख्य उपाय हैं तथापि महात्मापुरुषों का जीवन चरित्र पढने से हृदय में एक ऐसा अलौकिक भाव उत्पन्न होता है कि मनुष्य तुरन्त ही महात्माओं के सदाचारका अनुसरण करके शान्ति लाभ कर सक्ता है। महात्माओं के चरित्र को भी यदि सच्छास्त्र कहें तो अत्युक्ति न होगी। उक्त आशय को पूर्ण करने के लिये हम आपको अर्हत् भगवान् **श्री १००८ वर्धमान [महावीर] स्वामी जी महाराजका जीवनचरित्र** लागत के मोल पर भेट करते हैं आशा है कि आप उक्त विचित्र चरित्र को सावधानी से आद्यन्त पढकर पुरुषार्थचतुष्टय को लाभ कर सकेंगे।

श्री भगवान् ने बहत्तर (७२) वर्ष की अवस्था तक इस धराधाम को अपनी पवित्र अमृतमयी वाणी से पवित्र किया स्वयं सत्यमार्ग पर आरूढ होकर लाखों प्राणियों को सत्यमार्ग पर आरूढ़ कराया अधिक क्या लिखा जावे इस जीवनचरित्र में जन्म से अन्ततक सम्पूर्ण विषयों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है।

हे सज्जनो ! यदि आप आत्मवाद, कर्मवाद, जीवतत्व वा अजीव-तत्व आदि का पूर्ण निश्चय किया चाहते हैं तो इस पुस्तक में लिखी गई श्री भगवान् महावीर जी की उपदेशामृततरंगिणी में स्नान करके कृतार्थ हो जाओ।

विदित हो कि इस पुस्तक में किसी भी मत का खण्डन अथवा मंडन दृष्टि मात्र भी नहीं किया गया है इस कारण यह पुस्तक प्रत्येक जैनी को निष्पक्षपात दृष्टि से अवलोकन करने योग्य है जैनों के लिये यह ग्रन्थ एक मात्र रत्नों का भण्डार और जीवन का सार तो है ही परन्तु साधारन नर नारी भी इस विचित्र रत्न द्वारा सदाचार और विज्ञान के धनी होसक्ते हैं

यह पुस्तक मुम्बई के सुप्रसिद्ध "निर्णयसागर" प्रेसमें बहुत उत्तम विलायती कागजपर सुन्दर मोटे अक्षरों में अभी छपकर तयार हुआ है कागज की तेजीके कारण प्रति बहुत थोड़ी छपी हैं इसलियें शीघ्र मगाईये नहीं तो पीछे पछताना पडेगा कुलपृष्ठ १५० हैं विला-यती कपड़े की जिल्द भी बंधी हुई है इसके अतिरिक्त कर्ता का बहुत सुन्दर चित्र भी पुस्तकमें लगा हुआ है परन्तु मूल्य केवल ।।।) बारह आने मात्र है

ऊपर लिखे पुस्तक मिलनेका पताः—

मेहरचन्द्र लक्ष्मणदास जैन,

संस्कृत पुस्तकालयाध्यक्ष **लाहौर.**

सर्व प्रकारके जैनपुस्तक मिलनेका पताः—

मैनेजर—श्रीअमरजैनपुस्तकालय,

सैद मिट्ठा बाज़ार, **लाहौर.**